TIGHT BINDING BOOK

TEXT IS CUT WITHIN
THE BOOK

UNIVERSAL
LIBRARY

OU_180366

UNIVERSAL
LIBRARY

जन्म-पत्र

– मौलिक एवं मनोवैज्ञानिक कहानियों का संग्रह —

: १९५२ :

प्रथमावृत्ति

देवीप्रसाद भवन 'विकल'

प्रकाशक
सीता प्रकाशन
अनरलगंज, कानपुर ।

मुद्रक
पं० शम्भूनाथ
'सुधा प्रेस
अनरलगंज, कान

समर्पण

जीवन-संगिनी श्रीमती सीतादेवी
बी० ए० 'हिन्दी-प्रभाकर' को

तुम्हारा
देवीप्रसाद धवन 'विकल'

'सीता प्रकाशन'
कानपुर
२५-४-५२

पने मुंह से—

'जन्म-पत्र' मेरी इधर दो वर्ष के भीतर लिखी हुयी कहानियों का ह है। ये कहानियां पत्र-पत्रिकाओं में प्रकाशित हो चुकी है। ल्ली की रानी' के कथानक को लेकर मैं लगभग दो सौ पृष्ठ का न्यास भी 'दिल्लीश्वरी' के नाम से लिख चुका हूं। वह लगभग दो ं हुये आगरा से प्रकाशित हो चुका है।

मुझे अपनी सभी कहानियां बहुत पसंद हैं। 'जब नक्षत्र टूटा' हानी' विशुद्ध रूप से मनोवैज्ञानिक कहानी है। 'वह क्या था ?' ानी व्यक्तिगत अनुभूति की बात है। उसमें सभी कुछ कल्पित नहीं । पाठक आरा जाकर अब भी उस दृश्य का संभवतः आनंद उठा ते हैं। मैं नहीं जानता कि हकीमजी अभी जीवित हैं या नहीं। मैं त घटना के समय सन् १९३४ में आरा गया था। 'मंगू पंसारी' कोरी कहानी ही नहीं है—उसमें कुछ तत्व है। 'धर्म की खोज' मौलिक रचना है तथा मैं यह मुक्त कंठ से कह सकता हूं कि यह ानी अपना एक स्थान रखती है। 'आगामीर की ड्योढ़ी' एक तिहासिक कहानी है तथा ऐतिहासिक घटनाओं पर आधारित है। गामीर के वंशज कानपुर में रहते हैं तथा उनसे मेरा व्यक्तिगत चय है।

मेरे पिछले दो कहानी-संग्रह—'प्रदर्शनी' तथा 'दस कहानियां..... ठकों को अच्छे लगे हैं। आशा है यह संग्रह भी उन्हें पसंद आयेगा।

—देवीप्रसाद भवन 'विकल'

श्री देवीप्रसाद भवन का परिचय देकर उनका उपहास करना है। सिद्धहस्त कहानीकार, कुशल पत्रकार और विचारवान निबंध-लेखक।

उनका यह कहानी-संग्रह पाठकों के सामने उनके अवलोकन और प्रतिभा-कणों के साथ आ रहा है। उनकी बहुमुखी सफलता के लिये बधाई।

वृन्दाबनलाल वर्मा

झांसी

११/६/१९५२

मनोवृत्ति की बात

★

मैं अधिक सुन्दर नहीं हूं किन्तु वे मुझे बहुत चाहते हैं। पति का प्रेम पाकर कौन स्त्री धन्य न होगी ? पतिगर्विता नारी शासक की भांति कुछ अहमन्य सी हो उठती है। तभी तो बातों ही बातों में मैं उनसे कह दिया करती हूं कि 'आप लोगों की प्रीत मुंह देखी हुआ करती है।'

वे मुसकुरा कर उत्तर देते हैं 'यह बात नहीं है प्रेम ! संसार में सब एक से नहीं हुआ करते। क्या तुमने मेरी भी गणना उन्हीं लोगों में कर डाली है ?'

मैं ज़रा बनकर कहती 'चलो हटो। ये बातें और किसी को सुनाइयेगा। यदि कल मैं मर जाऊं तो उसके दूसरे दिन ही दूसरी को लाने की तैयारी होने लगे। इसीलिये तो मैं कहती हूं कि पुरुषों की प्रीत मुंहदेखी हुआ करती है।'

वे आवश्यकता से अधिक भावुक होने के कारण इस प्रकार की बातें अधिक पसंद नहीं करते। मैं यह भी विश्वासपूर्वक कह सकती हूं कि वे इस प्रकार के पुरुष हैं नहीं। किन्तु इस प्रकार की बातें करने में स्त्रियों को कुछ आनन्द आता है। उसी आनन्द को लेने के लिये मैंने कहा 'अगर मैं मर जाऊं.....'

मेरे मुंह पर हाथ रखते हुये वे बोले, 'मुझे इस प्रकार की बातें अच्छी नहीं लगतीं कुसुम। दिन भर मरने-जीने की बातें करना स्त्रियों का कुछ स्वभाव सा होता है। मरना वही चाहता है जिसका जीवन असफलताओं से भरा होता है।'

मैं अब किंचित गम्भीर सी होगयी थी। बोली 'स्त्रियों का जीवन भी कोई जीवन है। वह तो पुरुष के शरीर का वस्त्र मात्र है। जहां एक फटा झट दूसरा बदला। मैंने ऐसे पतियों को देखा है जो बिना पत्नी के एक मिनट भी न रह सकने का दम भरते थे किन्तु पत्नी के मरते ही उनका वह प्रेम न जाने कहां उड़न

हो गया। झट-दूसरी ले आये। क्या विडम्बना है ? वाह क्या कहना है आप लोगों के प्रेम को ?'

वे बोले 'तुम्हारा कहना भी ठीक है कुसुम किन्तु...'

मैं बीच ही में बोल उठी 'ये किन्तु और परन्तु आप और किसी को सुनाइयेगा। मैं तो स्पष्ट ही कहती हूं कि अगर कल मैं न रहूं तो आप ही फिर से दूल्हा बनने के लिये मचलते दिखाई पड़ेंगे।'

वे चुप रहे।

मैं तो सब कुछ हंसी में कह रही थी किन्तु मैंने देखा कि वे कुछ अधिक गम्भीर होगये हैं। उनके कंधे पर हाथ रखते हुये मैंने धीरे से कहा 'क्या बुरा मान गये ? अच्छा अब ऐसी बात न कहूंगी। सच बात कुछ कड़वी ही हुआ करती है।'

किन्तु फिर भी उनकी गम्भीरता कुछ कम न हुयी। बोले 'तुम्हारी बातें सारहीन नहीं हैं कुसुम। मुझे भी विश्वास नहीं होता कि जो व्यक्ति वास्तव में अपनी पत्नी को अधिक प्यार करता है वह उसके मरते ही दूसरा विवाह कैसे कर लेता है ?'

अब मैं कुछ बिगड़कर बोली 'जी हां। बड़े धर्मात्मा जो हैं आप लोग। मैं तो सच ही कहती हूं कि अगर कल मैं मर जाऊं तो आपसे दो दिन भी तो न रुका जायगा। कहो तो एक दिन मरकर दिखला दूं ?'

उन्हें कदाचित् यह बात बहुत ही बुरी लगी। वे गंभीर मुद्रा में चुपचाप बैठे रहे।

मैंने सोचा कि मैं अब मनोरंजन की सीमा पार कर रही हूं।

इतने ही में वे बोल उठे 'किन्तु ऐसा कोई क्यों करता है ? हृदय के जिस......

मैं कुछ खिसियानी सी होकर बोली 'इतना बुरा मानने की क्या जरूरत है। मर कर मैं कुछ देखने थोड़े ही आऊंगी; जो मन में आये सो करना।'

वे अत्यंत ही उदास होकर बोले 'इन बातों से मेरा चित बड़ा दुखी होता है कुसुम ! मैं इस समय इन बातों के लिये तुम्हारे पास न आया था। अच्छा मैं जा रहा हूं।'

वे उठ कर जाने लगे।

मैंने मुसकुरा कर उन्हें पकड़ लिया और बोली 'अच्छा अब कभी न करूंगी ऐसी बात। आओ बैठो— और फिर मैं कुछ मरी थोड़े ही जाती हूं बाबा।'

वे बोले 'ऐसी बातें करके तुम भी प्रसन्न न हो सकोगी। किसी न किसी दिन इसका तुम पर भी व्यापक प्रभाव पड़ कर ही रहेगा।'

मैं हंस कर बोली 'लेकिन विश्वास रक्खो मैं मरूंगी ही नहीं।'

[२]

और उसी दिन रात्रि में मैं बिना किसी असाधारण बीमारी के ही चल बसी। मेरी सांस बंद हो गयी थी

मेरे चारों ओर रोने वालों की भीड़ सी लगी हुयी थी मेरी आंखें उन्हें खोजने लगी। वे किंकर्तव्यविमूढ़ से ए कोने में सिर नीचा किये बैठे हुए थे।

तब क्या मैं सचमुच मर गयी हूं ?

मेरी ननद—जिन्होंने जीवन भर मुझे शत्रु सम कर गालियां ही दी थी—मेरे सिरहाने खड़ीं बिल बिलख कर कह रही थीं 'बेचारी बड़ी भली थी। कि से लड़ना तो जानती ही न थी।'

मेरी सास—जिन्होंने लड़ लड़ कर मेरा जीवन दू बना दिया था—धाड़ मार कर रो रही थीं और व रही थीं 'सात जनम में भी किसी को ऐसी बहू नहीं मि सकती। मेरे ऊपर तो जान देती थी।'

मैं मर गयी हूं। मेरा स्थूल शरीर नष्ट हो गया किन्तु मैं सब कुछ देख रही हूं...सुन रही हूं। सब अपने प्रति अपार प्रेम देख कर मैं फूली नहीं समा र हूं। मैं उन लोगों से कहना चाहती हूं कि 'तुम ल व्यर्थ में शोक मना रहे हो। मैं तो तुम सब लोगों बीच में मौजूद ही हूं। किन्तु...किन्तु इच्छा होते ह भी मैं कुछ कह नहीं पा रही हूं। मेरा स्थूल शरीर न जो हो गया है।

तब क्या मैं वास्तव में मर गयी हूं।

किन्तु न जाने क्यों मुझे विश्वास नहीं होता कि मर गयी हूं। मैं तो सभी कुछ देख-सुन रही हूं फिर

ैसे मान लूं कि मैं मर गयी हूं । किन्तु यह क्या ? लोग ुझे उठाकर कहां लिए जा रहे हैं ?...मुझे...किन्तु मैं ो किसी को रोक नहीं पा रही हूं ।

वे मुझे कदाचित् श्मशान लिए जा रहे हैं ।...तब ..ओह...मुझे चिता पर रख रहे हैं ।...आह...आंह...

मैं अब संसार में नहीं हूं । मेरा स्थूल शरीर चिता ो लपटों में नष्ट हो गया है । किन्तु मैं अब भी अपने र पर ही हूं...सब कुछ देख रही हूं ।

✦ ✦ ✦

मैं अब इस लोक में नहीं हूं । मैं स्वयं ही अपने थूल शरीर को नहीं देख पाती । अपने ही घर में रहकर दिन भर सबको देखा करती हूं । वे अब चुप रहते । उनके शोक का पारावार नहीं है । वे प्राय: लंबी ांस लेकर रह जाते हैं । मैं उन्हें इस प्रकार उदास खकर दु:खी हो जाती हूं । इच्छा रखने हुए भी नहीं कह ाती कि 'मैं तुमसे दूर नहीं हूं ।'

वे कुरसी पर उदास बैठे हुए हैं । मेरी ननद धीरे से नके पास आकर बैठ गयीं । मैं भी निकट ही चक्कर ाट रही हूं ।

ननद जी बोलीं 'इतने उदास क्यों हो भइया । अब । तुम्हें कुछ और प्रबन्ध करना ही पड़ेगा । इस तरह तो ाम चलेगा नहीं । अभी तुम्हारी उमर ही क्या है इया ?'

मैं सोच रही थी...मुझे दृढ़ विश्वास भी था... वे इस बात का बड़ा कड़ा उत्तर देंगे किन्तु वे झुकाये चुपचाप बैठे रहे।

ननदजी फिर बोलीं 'वे थीं ही क्या ? मैं तो तुम्हारे लिए हूर की सी परी ला सकती हूं। एक से एक अच्छी मिलेंगी तुम्हारे लिए।'

मैं सोच रही थी कि वे अब ननदजी को कड़ा उत्तर देकर फटकारने ही वाले हैं किन्तु उन्होंने कहा 'मैं इसी बात पर विचार कर रहा हूं।'

'अयं !' यह क्या कहा उन्होंने ? मेरा हृदय जल उठा। क्या वे भी दूसरा विवाह करने के लिए विचार कर सकते हैं ? ऐसा कभी नहीं हो सकता। बहिन को टालने के लिए ही उन्होंने ऐसा कह दिया होगा। वे कभी दूसरे विवाह की बात भी नहीं सोच सकते।

मेरे कान फिर खड़े हुए। ननदजी कह रही थीं 'मेरी ही रिश्तेदारों में एक बहुत ही बढ़िया लड़की है भइया देख कर तुम्हारा जी खुश हो जायगा।'

वे धीरे से बोले 'क्या उम्र होगी उसकी ?'

ननदजी बोलीं 'अभी उसकी उमर ही क्या है तुम्हारे ही जोड़ की होगी। कहो तो कल बुलवा के दिखला दूं तुम्हें। इसी शहर में तो रहती है।'

वे बोले 'अभी घर में भीड़-भाड़ है। जब सब लो

ले जायं तब बुलवा लेना। विवाह तो करना ही होगा। बिना उसके काम कैसे चलेगा।'

मैं यह सब क्या सुन रही हूं? क्या सचमुच ये उसके ही शब्द हैं? ये क्या फिर विवाह करेंगे मेरे होते?

क्रोध में भर कर मैं उन्हें धिक्कारने और फटकारने लिए आगे बढ़ी। किन्तु...आह...! मैं तो मर चुकी। मेरा स्थूल शरीर तो नष्ट हो चुका है...चिता में।

[३]

मेरी आत्मा जल सी रही है। मैंने उन्हें प्रसन्नता के साथ विवाह करके दूसरी स्त्री को लाते देखा है। तब क्या वह सारा प्रेम...सारी भावुकता ढोंग मात्र ही थी?

मेरी आत्मा दिन-रात जलती रहती है। मैं अब उनके हृदय में अपने लिए कहीं स्थान नहीं पा रही हूं। वे नवपरिणीता के साथ आमोद-प्रमोद में अपने और मुझको भूले हुए हैं...किन्तु मैं क्रोध और क्षोभ में जल रही हूं।

वे शीला से कह रहे हैं 'शीला मैं सचमुच तुम्हारे बिना एक क्षण भी नहीं रह सकता। तुम से कितना प्रेम करता हूं जानती हो?'

शीला कहती है 'मैंने सुना है कि आप उन्हें भी बहुत चाहते थे।

वे इस अप्रिय प्रसंग को बदलने के अभिप्राय से कहते हैं 'हटाओ उस बात को। जितना तुम्हारे प्रेम ने मुझे प्रभावित किया है उतना किसी ने भी नहीं। तुम मेरी प्राण हो।'

क्षण भर चुप रह कर शीला कहती है 'क्या आपको कभी उनकी भी याद आती है ?'

वे मुंह बना कर बोले 'तुम भी क्या बेकार की बातें करने लगीं। हटाओ उस बात को।'

शीला खिसिया सी गयी।

वे बोले 'मैं तो तुमसे प्रेम करता हूँ शीला। तुम्हारा प्रेम कभी भूलने की वस्तु नहीं है।'

मैंने चिल्लाकर कहना चाहा 'झूठ...एकदम झूठ... बिल्कुल झूठ...मैं सच कह रही हूं ये किसी से प्रेम नहीं कर सकते...ये झूठ बोलते हैं...एकदम झूठ...ये किसी से प्रेम नहीं कर सकते...किसी से प्रेम नहीं करते...'

किन्तु मैं चिल्ला न सकी। मेरा स्थूल शरीर नष्ट हो गया है। मैं मर चुकी हूं।

वे कह रहे थे 'मैं उन्हें प्यार अवश्य करता था शीला किन्तु अपनी मूर्खतापूर्ण और अनर्गल बातों से उसने अपना वह प्यार खो दिया था। उनका स्वभाव कुछ मेरे प्रतिकूल था। विशेष पढ़ी-लिखी न होने के कारण...

मैं अब और अधिक अपने को न रोक सकी। चिल्ला ही पड़ी 'झूठ...एक दम झूठ...मैं सच कह रही हूं ये

किसी से प्रेम नहीं कर सकते...ये किसी से प्रेम नहीं करते...इनका प्रेम बनावटी है...दिखावटी है...ये झूठ बोल रहे हैं...एकदम झूंठ...झूंठ...झूं...झूं...ठ

'क्या हुआ कुसुम ? क्या हुआ ? क्या सपना देख रहीं थीं ? उठो...उठ बैठो।' उनकी बोली सुनायी दी।

मैं आंख फाड़ कर चारों ओर देख रही थी।

वे मेरे सिर पर हाथ फेरते हुय कह रहे थे 'क्या सपना देख रहीं थीं कुसुम ? तुम तो खूब ही चिल्लायी। उठो थोड़ा सा पानी पीलो।'

मेरे मुंह से निकला 'शी--ला...'

वे बोले शीला ? कैसी शीला ? होश में आओ कुसुम।'

मैं अब भी आंख फाड़ कर चारो ओर देख रही थी।

× × ×

दूसरे दिन मेरे सपने को सुनकर वे मुसकुरा कर बोले 'और सब ठीक है किंतु मैं बिना इन शीलाजी को देखे नहीं रह सकता।'

मैं कुछ मुसकुरा कर बोली 'किन्तु होता तो पुरुषों का प्रेम बनावटी ही है।'

वे बोले 'यह ठीक है। किन्तु वे स्वप्न में भी कभी व्यर्थ की बात नहीं सोचा करते।'

★

कामायिनी

(१)

इस पुल का भी एक इतिहास है। नलिनी से प्रेमनाथ की भेंट सबसे पहिले यहीं हुयी थी। तब उसने कल्पना भी न की थी कि यह साधारण सी भेंट आगे चल कर उसके जीवन की एक महत्वपूर्ण घटना हो जायगी। कदाचित उसे ज्ञात न था कि महत्व का 'अर्थ' साधारण ही होता है किन्तु 'इति' होते-होते उसकी पूरी परिभाषा बन जाती है। जिस कांटे की ओर हमारी दृष्टि भी नहीं जाती वही तो चुभ कर असह्य शूल उत्पन्न करता है। जीवन की जिन बारीकियों को हम नगण्य

समझते हैं प्राय: उन्हीं के लिये संघर्ष करते-करते जीवन ही समाप्त होजाता है। प्रेमनाथ के जीवन की यह छोटी सी घटना इसी पुल पर हुयी थी किन्तु आज यही पुल उसके लिये देव-स्थान बन गया है।

संध्या को कालेज से छुट्टी पाने के पश्चात् वह टहलता हुआ इसी पुल की ओर चला जाता था और घंटा दो घंटा इस पर बैठ कर भगवती जान्हवी की कल्लोल-पूर्ण लहरों में अपने को खो सा दिया करता था। नेत्रों में बल और मस्तिष्क में आत्मसात की भावना पाकर वह पुस्तक खोलता और तब तक अध्ययन में रत रहता जब तक प्रकृति अपनी काली चादर से समूचे प्रकाश को ढक न लेती। वह चुपचाप उठता और पुस्तक बगल में दबा कर लहरों के कलकल-हास से बाहर होजाता।

और तभी—

एक दिन नलिनी से उसकी भेंट होगयी। कदाचित् वह भी पुल पर टहल कर अपना चित्त बहलाने के लिये इधर तीन-चार दिन से आने लगी थी। वह पुस्तक पढ़ने में संलग्न प्रेमनाथ को निकट से देखती हुयी आगे बढ़ जाती। प्रेमनाथ संकोची और एकान्त-प्रेमी जीव है। वह देख कर भी मानो नलिनी की ओर नहीं देखना चाहता। नलिनी की अपेक्षा कविवर 'प्रसाद' की 'कामायनी' कदाचित् उसके लिये अधिक आकर्षण की वस्तु है। वह इस दुबली-पतली साधारण वर्ण की तथा

अनाकर्षक नलिनी में देखता ही क्या ? कवि की कल्पना में तो वह सभी कुछ देख सकता था। कल्पना मोहक है और जब वह किसी सूने हृदय में अपनी क्रीड़ा के चित्र खींचने लगती है तब वह मादक भी होजाती है। इन क्रीड़ाओं के जो चित्र बनते हैं उनका स्तर इतना ऊंचा होता है कि कभी कभी वास्तविकता से उनकी तुलना हो ही नहीं पाती। अंतर के नेत्र बाहर का सभी कुछ भूलकर अंतर की परिधि में ही चक्कर काटते रहते हैं। इसी सगुण कल्पना के बल पर ही तो कवियों ने ईश्वर-दर्शन तक होजाने की बात कही है।

सहसा वीणा-विनिन्दित स्वर में प्रेमनाथ को सुनायी दिया 'कामायिनी पढ़ रहे हैं आप ?'

प्रेमनाथ के मानस से कामायिनी लुप्त होगयी थी। उसे दिखायी दीं कृशकाय नलिनी की चमकती हुई दो आंखें।

खड़े होकर उसने कहा 'जी हां। कामायिनी ही पढ़ रहा हूं। आप—

नलिनी बोल उठी 'जी। मैं डी० ए० वी० कालेज की बी० ए० की छात्रा हूं। यह कामायिनी मेरे मत्थे भी पड़ी है।'

कहकर वह मुसकुरा दी। प्रेमनाथ मानों अब कल्पना को साकार अपने सामने खड़ा देख रहा था। कामायिनी अब दूर जा चुकी थी और उसके स्थान पर विधाता की चित्रकारी की साकार मूर्ति आकर खड़ी होगयी थी।

उसे चुप देख कर नलिनी ने कहा 'मुझे तो यह कामायनी एक बला सी मालूम पड़ती है। मन नहीं लगता पढ़ने में।'

प्रेमनाथ संभला। उसके मस्तिष्क में भी कामायनी सिमट कर एक पुस्तक मात्र सी रह गई थी। बोला, 'ऐसी कुछ कठिन तो नहीं है। कवि 'प्रसाद' की सुकोमल भावनाओं में डूब कर आनन्द ही मिलता है। प्रसाद जैसे कवि की रचना का आनंद लेने के लिए तो स्वयं को भी कवि की भांति भावनाओं और कल्पनाओं में खो देना पड़ता है।

नलिनी बोली 'भाषा क्लिष्ट है और भाव भी तो सहज ही समझ में नहीं आते। मालूम पड़ता है आप भी कवि-हृदय रखते हैं तभी तो.....।'

और फिर वह हंस दी। प्रेमनाथ बोला 'आपको कामायनी कठिन जान पड़ी क्या ? ऐसा तो कोई स्थल है नहीं जो समझ में न आता हो।'

नलिनी झट बोल उठी, 'मेरी समझ में कामायनी खाक नहीं आई। विशेष रूप से 'आशा' वाला भाग।'

प्रेमनाथ मुस्कुरा कर चुप रह गया। नलिनी बोली 'आप तो रोज यहां आकर पढ़ते हैं।'

'हां यों ही टहलने चला आता हूं।' प्रेमनाथ ने उत्तर दिया।

कुछ देर रुक कर नलिनी बोली, 'अगर कष्ट न हो तो थोड़ा मुझे भी समझा दें। कल आप आयेंगे न ?'

प्रेमनाथ बोला 'हां ! जितना मैं समझ सका हूं उतना आपको अवश्य समझाने की चेष्टा करूंगा।'

(२)

उस दिन प्रेमनाथ उसका नाम पूंछना भूल गया था। दूसरे दिन उसी स्थान पर भेंट करते हुए उसने कहा, 'मैं आपका नाम·····।'

'नलिनी बोल उठी, 'मुझे नलिनी कहते हैं।'

'मैं प्रेमनाथ हूं' धीरे से प्रेमनाथ ने कहा।

लगभग दो घंटे तक प्रेमनाथ उसे प्रसाद की भाषा और भावों के विषय में समझाता रहा। उसने समझाया कि किस प्रकार कवि प्रसाद ने जीवन की उन बारीकियों को जिनका रहस्य सतह से कुछ ऊंचा है जन साधारण के सामने ला रक्खा है। उन्होंने प्रायः हृदय के उस कोने का स्पर्श कियाहै जिसमें करुणा, ममता, वेदना, पीड़ा टीस, ममत्व तथा वैकल्य भरा हुआ है। मानवता के इन अनिवार्य अंगों को सर्व प्रथम प्रसाद के कवि ने देखा। तत्पश्चात् उन्हें सुमधुर और सुकोमल भाषा में लपेट कर कविता के रूप में प्रस्तुत किया। प्रसाद ने इन अंगों की स्वीकृति के लिए मानव के हृदय में एक वेदना उत्पन्न करने का प्रयास किया है। उनकी प्रतिभा उत्तरोत्तर विकासशील रही है। किसी भी स्थल पर शैथिल्य के दर्शन नहीं होते।

कामायनी के कुछ स्थलों को स्पष्ट करते हुए प्रेमनाथ ने कहा, 'आज इतना ही। शेष कल के लिए है।'

नलिनी दो ही दिनों में प्रेमनाथ के बहुत निकट सी आ गई थी। धीरे से उसका हाथ पकड़ते हुए बोली 'वास्तव में आप गुरू होने योग्य हैं।'

प्रेमनाथ मुस्कुराता हुआ बोला 'अब क्या बनाना मुझे प्रारम्भ कर दिया आपने ?'

नलिनी हंसती हुई बोली, 'प्रसाद जी को आपने खूब समझा है। मैं तो मूढ़ ही रही। आज यदि कुछ कुछ समझ में आ रहा है तो आपको क्यों न गुरू मान लूं।'

प्रेमनाथ मुस्कुरा कर चुप रह गया। नलिनी कह उठी परीक्षा के अब दिन कितने रह ही गए हैं ? आपको तो अब रोज ही पढ़ाना होगा। अब आप इंकार न कर सकेंगे।'

उसकी स्पष्टवादिता और कल्पना से परे का नैकट्य देख कर प्रेमनाथ स्तम्भित सा रह गया था। बोला, 'हां-हां अवश्य।'

थोड़ी देर तक दोनों चुप रहे। फिर प्रेमनाथ बोला, 'इस पुल पर तो सह-अध्ययन कुछ अधिक सुविधाजनक नहीं जान पड़ता। यदि और किसी स्थान पर·····

नलिनी पूछ बैठी, 'आप होस्टल में रहते हैं ?'

'हां' कह कर प्रेमनाथ चुप हो गया।

क्षण भर चुप रह कर नलिनी ने कहा 'क्या आप मेरे घर आ सकेंगे ?'

प्रेमनाथ बोला आपके घर में कौन·····

बीच ही में नलिनी बोल उठी 'मेरे अतिरिक्त घर में और कोई नहीं है।'

प्रेमनाथ आश्चर्य से उसकी ओर देखने लगा। हंसती हुई नलिनी बोली 'क्या डर गये ?'

प्रेमनाथ अपने भावों को छिपाता हुआ बोला 'नहीं मैं आपके घर ही आ जाऊंगा।'

नलिनी ने पता बता दिया। दोनों चलने के लिये उठे। नलिनी बोली, 'मेरे लिए यह एक समस्या थी। मुझे इस वर्ष बी० ए० पास करना ही है। आप खूब मिले। अब ये प्रसाद महोदय भी सीधे पड़ जायंगे।'

कहकर वह हंस दी। प्रेमनाथ हंसता हुआ बोला, 'अब प्रसाद से डरने की आवश्यकता नहीं है।'

नलिनी हंसती हुई बोली, 'मैं आज से आपको प्रसाद जी कह कर पुकारा करूंगी। आप बुरा तो न मानेंगे ?'

प्रेमनाथ थोड़ी देर चुप रह कर बोला 'मुझे कोई आपत्ति नहीं है। किन्तु क्या मैं भी आपको कामायनी कह कर पुकार सकता हूं ?'

नलिनी ने मुस्कुरा कर स्वीकारात्मक ढंग से सिर हिला दिया।

(३)

प्रेमनाथ का पुल पर टहलना और पढ़ना छूट गया। परीक्षा के कुछ ही दिन शेष रह गये थे। नलिनी के साथ

उसका घर पर सह-अध्ययन होने लगा। अब प्रेमनाथ होस्टल में केवल भोजन करके सो जाता है।

और एक दिन वह नलिनी से पूछ बैठा, 'तुम्हारे और कोई नहीं है क्या ?

नलिनी मुसकुराते हुए सिर हिलाकर बोली, 'मैं फक्तदम हूं। यह रोग तो पाला ही नहीं मैंने।'

आश्चर्य में भरकर प्रेमनाथ बोला, 'तुम्हारा इतिहास तो कुछ विचित्र सा मालूम पड़ता है कामायिनी ? 'मुझे तो तुम एक समस्या सी प्रतीत होती हो।'

नलिनी अब जरा गंभीर होकर बोली, कदाचित् आप ठीक ही कह रहे हैं। स्वयं स्त्री ही एक समस्या है। वह सारे संसार के लिए समस्या है और स्वयं अपने लिए भी एक समस्या है। अच्छा हो यदि यह समस्या ज्यों की त्यों रहने दी जाय। इसका हल भी तो एक अभिशाप है।'

प्रेमनाथ भी गहराई में जाने लगा था। बोला 'स्त्री समस्या अवश्य है किन्तु पुरुष जाति को आप क्या समझती हैं ?

ज्वालामुखी सा फूट पड़ा था। वह मुखर और अगंभीर तरुणी एकाएक स्फुट-स्वर में बोल पड़ी थी, 'धोखा फरेब और स्वार्थों का पुतला। इसके अतिरिक्त मेरे पास पुरुषों के लिए और कोई विशेषण नहीं है।'

नलिनी का मुंह लाल हो गया था। प्रेमनाथ आश्चर्य के साथ उसके मुंह की ओर देख रहा था।

कुछ शांत होकर नलिनी ने कहा, 'बुरा न मानियेगा आप। पुरुष के लिए स्त्री सदा एक खिलवाड़ रही है। कभी गंभीर होकर उसने इस समस्या पर विचार ही नहीं किया। स्त्री एक समस्या है जिसका हल आज तक कोई पुरुष प्रस्तुत न कर सका।'

वह कुछ व्यथित सी प्रतीत होने लगी। थोड़ी देर बाद प्रेमनाथ का मुंह खुला कदाचित आप ठीक ही कह रही हों। जीवन की भूमिका ही में आप पर व्याघात हुआ है। भुक्त-भोगी ही परिभाषा ढाल सकता है। अधिकारपूर्ण निर्णय भी दे सकता है।'

नलिनी यकायक हंस दी। बोली, 'मैं न जाने क्या क्या कह गयी आपसे। यह सब कुछ तो प्रसाद महोदय की कामायनी का ही प्रभाव मालूम पड़ता है। आप मेरी बात पर जरा भी गंभीर न हों। यह सब तो मैंने आपको प्रभावित करने के लिए कहा था।'

और नलिनी फिर खिलखिलाकर हंस दी। प्रेमनाथ के लिए वह फिर एक पहेली सी बनती जा रही थी। वह जरा गंभीर होकर बोला, 'अब छिपाने से काम न चलेगा नलिनी। तुम्हारे इस हंसते हुये शरीर के अन्दर एक वेदना सी छिपी जान पड़ती है।'

नलिनी अब और अधिक रुक न सकी। बोली, 'मैं रहस्यवाद की कविता सी हूं प्रेमनाथ! व्याघात से ही जीवन की प्रवृत्तियों में परिवर्तन होता है।'

प्रेमनाथ पूछ बैठा, 'आप विवाहित हैं ?'

कदाचित् नलिनी इस प्रकार के प्रश्न के लिए तैयार न थी। किन्तु मुस्कुराकर बोली, 'आप यह भूल गये कि मैं कामायनी हूं।'

प्रेमनाथ उत्तर की गंभीरता समझकर बोले,'मैंभी तो मनु के संबन्ध में कुछ पूछना चाहता हूं।'

कहकर वे मुसकुरा दिए। नलिनी नीचा सिर किए कुछ सोच रही थी। थोड़ी देर पश्चात् बोली, 'आप यदि मनु के विषय में कुछ न जानना चाहते तो कुछ अच्छा ही था। जिन कारणों से मनु ने कामायनी का त्याग किया था कदाचित् मेरे भी त्याग के लगभग वैसे ही कारण हो सकते हैं।'

प्रेमनाथ कह बैठा, 'तब यह निश्चित है कि आप विवाहित एवं परित्यक्ता हैं। क्यों न ?'

नलिनी अब पूर्ण रूपेण गंभीर हो चुकी थी। बोली, 'आप ठीक ही समझ रहे हैं। इसी स्थल से हम दोनों अर्थात् मैं और मेरे पति कामायनी और मनु नहीं रह जाते। आशा है आप और अधिक जानने की चेष्टा न करेंगे।'

एक निःश्वास खींच कर प्रेमनाथ ने कहा 'मुझे आप के प्रति सहानुभूति है किन्तु इसी आधार पर आपने समस्त पुरुष जाति के प्रति एक धारणा जो बना ली है वह क्या आपका अन्याय नहीं है ?'

नलिनी धीरे से बोली, 'किन्तु मेरी उस धारणा में अब एक परिवर्तन हो गया है और वह परिवर्तन आपको ही देखकर हुआ है।'

प्रेमनाथ अनुभव कर रहा है कि आज वह पूर्णरूपेण नलिनी के प्रति आकर्षित है। वह पुरुष भाग्यहीन था जो नलिनी को छोड़ सका।

वह बोला 'किन्तु आप फिर मेरे सम्पर्क में क्यों आयीं? आपको तो पुरुषों से घृणा थी न?'

नलिनी बोली 'निस्संदेह। जब मैं प्रथम बार आपसे मिली थी तब मेरे मन में आपके प्रति भी वही भावना थी। किन्तु आज मैं अनुभव कर रही हूं कि वह निर्णय प्रतिशोध और प्रतिहिंसा की भावना को लेकर ही था।'

प्रेमनाथ को देर हो रही थी किन्तु उसका जी आज जाने को न चाहता था। जाने का उपक्रम करते हुए बोला 'अच्छा चलूंगा। फिर बात होगी।'

नलिनी उसका हाथ पकड़कर बिठलाते हुए बोली 'आज कामायनी समाप्त हो गयी है और साथ ही साथ मैं भी.....।'

बात काट कर हंसते हुए प्रेमनाथ ने कहा 'और कदाचित् अब आप भी अपने को कामायिनी पुकारा जाना पसंद न करेंगी। यही न?'

नलिनी एक विचित्र सा भाव चेहरे पर लाते हुए बोली, 'निस्संदेह। हृदय में विकार आते ही मैंने यह

निर्णय किया है। मैं अब इस क्षण से कामायनी नहीं हूं।'

प्रेमनाथ पूछ बैठा 'ऐसा क्यों ?'

नलिनी बोली 'कदाचित् कामायनी बनने में अब मेरा अहित है। ऐसा करके मैं अब उस वस्तु को न पा सकूंगी जिसके पाने की कल्पना मेरा हृदय करने लगा है।' प्रेमनाथ के मुंह से निकला 'कामायनी बन कर भी जो उस वस्तु को पाया जा सकता है नलिनी।'

नलिनी सहसा अपना मुंह प्रेमनाथ की गोद में छिपाते हुए बोली 'न-न-न अब मैं उसके निकट भी न जाऊंगी। नलिनी की कामायनी मर गयी।'

प्रेमनाथ उसके सिर पर हाथ फेरने लगा।

यकायक खड़ी होकर नलिनी ने कहा 'चलिए आज हम लोग पुल पर घूमने जायंगे।'

चलने का उपक्रम करते हुए प्रेमनाथ कहा 'क्या इतिहास की सारी घटनायें उसी पुल पर से प्रारंभ होंगी ?'

नलिनी हंस दी।

(४)

इधर नलिनी दो दिन से पुल पर नहीं आती। प्रेमनाथ घूमकर लौट जाता है। परीक्षा के कारण वह नलिनी के घर न जा सका था। कदाचित परीक्षा के ही कारण नलिनी न आ सकी हो।

आज हिन्दी का प्रश्न-पत्र समाप्त करके प्रेमनाथ

परीक्षा से छुट्टी पा गया है। कल के प्रश्न-पत्र में दो प्रश्न 'कामायनी' पर ही थे। कामायनी के चरित्र पर परीक्षक ने छात्रों से निबन्ध लिखने को कहा था। प्रेमनाथ बहुत सुन्दर लिख सका है। नलिनी को भी तो वह बहुत कुछ बता चुका था इस सम्बन्ध में। वह भी खूब लिख सकी होगी।

प्रेमनाथ आज बहुत प्रसन्न है। नलिनी सी स्त्री उसकी जीवन-संगिनी होगी। वह उसे पाकर धन्य होगा।

पुल पर नलिनी पहिले से ही आज आ गयी थी। आशा के विरुद्ध आज वह कुछ गंभीर मालूम हुयी।

प्रेमनाथ ने हंसकर कहा 'कामायनी पर तो अच्छा निबन्ध बन पड़ा होगा नलिनी ? सभी कुछ तो बता चुका था।'

नलिनी कुछ बोली नहीं। चुपचाप स्वीकारात्मक ढंग से सिर हिला दिया।

प्रेमनाथ पूछ बैठा, 'आज सुस्त क्यों हो नलिनी ? अब तो तुम्हें प्रसन्न होना चाहिये।'

नलिनी सूखी हंसी हंसकर बोली, 'सोचा था परीक्षा के बाद यह कामायनी मेरा पीछा छोड़ देगी। किन्तु कदाचित् ऐसा न हो सका।'

प्रेमनाथ पूछ बैठा 'इसका अर्थ ?'

नलिनी गंभीर होकर बोली 'कामायनी पर निबंध लिखकर मेरे ऊपर कामायनी की एक अमिट छाप पड़

गयी है। क्या मैं कामायनी का अनुकरण नहीं कर सकती प्रेमनाथ ?'

आश्चर्य में भरकर प्रेमनाथ ने कहा 'तुम यह सब क्या कह रही हो आज नलिनी ?'

नलिनी आवश्यकता से अधिक परेशान होती हुयी बोली 'मैं कामायनी ही बनी रहना चाहती हूं प्रेमनाथ। क्या तुम इसे पसंद करोगे.....जल्दी बोलो।'

प्रेमनाथ स्वयं परेशान था। बोला 'आज तुम्हें हो क्या गया.....

नलिनी जल्दी से बोली 'कामायनी.....बस मैं कामायनी बनना चाहती हूं। बोलो...बोलो—बोलो क्या इसे पसंद करोगे ?'

प्रेमनाथ धीरे से बोला 'वास्तव में स्त्री एक समस्या है।'

नलिनी स्फुट-स्वर में बोली 'हां ठीक कहते हो... स्त्री एक बहुत बड़ी समस्या है.....समस्या है..... बहुत ही गूढ़...विचित्र...और मैं.....कामायनी..... मैं कामायनी.....

और वह सहसा पुल पर से कूद पड़ी।

भगवती जान्हवी ने एक बार प्रश्न किया, 'कौन आया ?'

और फिर सब शांत।

प्रेमनाथ स्तब्ध सा खड़ा रह गया।

वह कामायनी.....

....

इस पुल का भी एक इतिहास है।.....उसने कल्पना भी न की थी कि यह साधारण सी भेंट आगे चलकर उसके जीवन की एक सबसे अधिक महत्वपूर्ण घटना हो जायगी.....किंतु आज वही पुल उसके लिए देव-स्थान बन गया है।

★

जन्म पत्र

[१]

जी० आई० पी० एक्सप्रेस के पहियों और कलपुर्जों से उत्पन्न चिर परिचित गड़गड़ाहट मेरी चिन्ताओं की गति को और भी तीव्र कर रही थी। फर्स्ट क्लास के मुलायम और गुदगुदे बर्थ पर बिछा हुआ मेरा मखमल सा बिस्तरा मेरे शरीर में कांटों सा चुभा जा रहा था। हृदय में एक गड्ढा सा प्रतीत हो रहा था और नाना प्रकार की भावनायें मस्तिष्क का चक्कर काट कर उस गड्ढे में प्रवेश तो कर जातीं किन्तु एक हल्का सा धक्का लगा कर वहीं विलीन सी होकर रह जाती थीं। बार-

बार करवटें बदलने पर भी आराम मिलता न देख मैं उठ कर बैठ गया।

और तभी.....

सामने वाली बर्थ पर लेटे हुये एक संभ्रान्त व्यक्ति कह पड़े 'क्या बज गया होगा अब ?'

रिस्टवाच की ओर लापरवाही से देखते हुये मैंने कहा 'आठ बज कर चालीस।'

क्षण भर बाद लेटे ही लेटे उन सज्जन ने कहा, 'झांसी जा रहे हैं आप ?'

मैं बोल दिया 'जी नहीं। मुझे लखनऊ जाना है।'

वे फिर चुप होगये। मेरी भी तबियत बात करने की न थी। प्राय: मैं यात्रा में मौन ही रहता हूं। व्यर्थ का सा परिचय बढ़ाने का मेरा स्वभाव नहीं है। मैंने अकसर देखा है कि लोग गाड़ी के चलते ही परस्पर बात करना आरंभ कर देते हैं। न जाने क्यों लोग थोड़े समय के लिए परिचय प्राप्त करना पसंद करते हैं। मुझ तो यात्रा के समय मौन रहना और जहां तक नेत्र जा सकें वहां तक प्रकृति-दर्शन का आनंद लेते रहना ही अच्छा लगता है।

मैं चुपचाप फिर लेट गया। मैंने उन महाशय की ओर से जान बूझकर मुंह फेर लिया जिससे वे मुझसे बात न कर सकें।

किन्तु अधिक काल तक मैं लेटा न रह सका। हृदय की उलझन बढ़ जाने से मैं फिर उठकर बैठ गया। वे महाशय बड़े गौर से मेरी ओर देख रहे थे। कदाचित्

मेरी अवस्था वे कुछ भांप सी गये थे। मुझे उनकी यह बात बड़ी अभद्र सी ज्ञात हुयी किन्तु करता क्या ? मुझे उनकी इस स्वतन्त्रता को अपहरण करने का किसी प्रकार का अधिकार तो प्राप्त था ही नहीं —केवल अपने भावों को दबाकर मुख पर प्रसन्नता के भाव लाने की चेष्टा करने लगा। मैंने कई बार कनखियों से उनकी ओर देखा। वे अब भी मेरे चेहरे का उतार चढ़ाव पढ़ रहे थे। मैं घबड़ा कर फिर लेट गया।

वे फिर बोल उठे 'आपको किसी बात का कष्ट है' क्या ?'

मैं फौरन कह पड़ा 'जी नहीं। सब आपकी कृपा है।

वे चेहरे पर एक हलकी सी मुसकान लाते हुए बोले 'आप कुछ अल्प-भाषी से मालूम पड़ते हैं।'

मैं कुछ खिसिया सा गया। बोला 'जी नहीं। यों ही जरा थक ज्यादा गया था इसलिये चुपचाप लेटा रहा। आप भी लखनऊ जा रहे हैं ?'

वे बोले 'जी हां। लखनऊ तक ही जाऊंगा। तभी तो मैं आपसे कहना चाहता था कि इस प्रकार की चुप्पी साधने से इतनी लम्बी यात्रा कटेगी कैसे ? यात्रा तो बातचीत करने से ही कटेगी। इस डिब्बे में कुल दो ही यात्री हैं और वे भी चुप। मैं तो जरा बातचीत करने का आदी भी हूं। किन्तु आप बम्बई से चुपचाप ही चले आ रहे हैं। आप लखनऊ में ही रहते हैं ?'

मैं बोला 'जी हां। लेकिन इधर साल दो साल से बम्बई में ही रहना होता है।'

मुझे और अधिक आगे बढ़ता न देखकर वे बोले 'आप व्यापार करते हैं ?'

मैंने उत्तर दिया 'जी हां। चांदी सोने का व्यापार होता है। लखनऊ में भी दूकान है और बम्बई में भी।'

वे सिर हिलाते हुए बोले 'तब यह कहिये कि मैं जौहरी साहब से बात कर रहा हूं। लीजिये खाइये।'

कहते हुये उन्होंने चांदी के पान का डिब्बा मेरी ओर बढ़ा दिया।

मैंने पान मुंह में रखते हुये कहा 'आप सरकारी नौकरी में हैं ?'

क्षण भर चुप रह कर उन्होंने कहा 'जी नहीं। मैं बैरिष्टर हूं।'

'आप लखनऊ में ही रहते हैं ?' मैंने पूछा।

'जी नहीं। मैं रहने वाला तो मध्य-प्रान्त का हूं। एक कार्य वश लखनऊ जा रहा हूं। बम्बई केवल सैर करने गया था।' कह कर वे चुप हो गये।

अब चिन्ताओं में कुछ कमी आ चली थी। यह मेरा नया अनुभव था। बातचीत में लगे रहने से कदाचित् मस्तिष्क और हृदय दोनों में ही शान्ति मालूम पड़ रही थी।

वे चुपचाप लेटे थे। मैं भी लेट गया। मस्तिष्क में फिर उसी प्रकार की भावनायें लहरें लेने लगी थीं।

अचानक वे कह बैठे 'आप किसी चिन्ता में अवश्य निमग्न हैं।'

भेद खुलकर ही रहा। मैं बोल उठा 'ऐसी कोई चिन्ता की बात नहीं है। और फिर इन्सान को किसी न किसी प्रकार की चिन्ता तो लगी ही रहती है।'

सिर हिलाते हुए वे बोले 'आप ठीक कह रहे हैं। स्वयं मैं कुछ चिन्ताओं से खाली थोड़ा ही हूं।'

और वे उठ कर बैठ गये।

सभ्यता के नाते मैंने उनकी ओर करवट ले ली।

वे बोले 'आप ब्राह्मण हैं ?'

मैंने उत्तर दिया 'जी नहीं। मैं खत्री हूं।'

मैं चुप रहा। वे कहने लगे 'क्या बताऊं आपसे ? लड़की बीस बरस की हो गयी है किन्तु कोई अच्छा लड़का ही नहीं मिलता। लड़की लिखी पढ़ी और सुन्दर है किन्तु फिर भी अभी तक सफलता नहीं मिल सकी। बड़ी आशाओं को लेकर बम्बई में एक लड़का देखने गया था किन्तु निराश होकर लौट रहा हूं। उन लोगों ने सीधे मुंह बात भी नहीं की। जी टूट सा गया।'

मैंने सिर हिलाते हुए कहा 'ऐसी बातों में जी टूट ही जाता है।'

वे थोड़ी देर चुप रहकर बोले 'आपकी नजर में कोई लड़का हो तो बतलाईये।'

मैं धीरे से बोला 'लड़के तो आपको कई बतला

सकता हूं। मगर इधर म कुछ परेशानियों में पड़ गया हूं नहीं तो अपना ही बच्चा है। इस वर्ष बी० ए० पास किया है।'

वे झट बोल उठे 'अपनी परेशानियों को बतलाइये तो शायद मैं कुछ आपकी मदद कर सकूं। मैं तो बम्बई से ही लक्ष्य करता चला आ रहा हूं कि आप किसी जबरदस्त परेशानी में पड़ गये हैं। अगर कोई मुकद्दमेबाजी की बात है तो मैं आप को अच्छी से अच्छी सलाह दे सकता हूं।'

जी में आया सब कुछ कह दूं किन्तु चुप रहा। वे बोले 'अगर किसी तरह का संकोच हो तो बात दूसरी है नहीं तो कह देने से जी कुछ हलका ही हो जाता है'

मैं कहने लगा 'मेरा एक छोटा भाई है—सगा। आठ-दस दिन हुये वह एक ऐसे झगड़े में फंस गया है कि बड़ी परेशानी पैदा हो गयी है।'

वे बोल उठे 'क्या फौजदारी हो गयी थी ?'

मैं कहता गया 'फौजदारी क्या वह तो एक बड़ा भयंकर कांड हो गया। मैं तो उस स्थान पर था नहीं किन्तु सुना है कि एक आदमी से उसकी शत्रुता चली आती थी उसी ने उसे जान-बूझ कर फंसा दिया।'

वे संभल कर बैठ गये और बोले 'आप मुझे ठीक ठीक घटना बतलायें तो मैं आपको काफी मदद दे सकूंगा।' मैं तो बैरिष्टर हूं। दिन रात इसी काम में रहता हूं। खुल कर कह जाइये।'

मैंने सोचा इन बैरिष्टर साहब से काफी सहायता मिल सकती है। इनसे तो सभी कुछ खुलासा ही कहना चाहिए।'

वे बोल उठे 'आप किसी प्रकार का संकोच न करें। लखनऊ में सभी अफसर मेरी जान पहिचान के हैं। आपकी मैं मदद करूंगा।'

मैं कहने लगा 'मामला बड़ा संगीन है। बात यह है कि मेरे भाई का चाल-चलन कुछ अच्छा नहीं है। एक आवारा औरत के यहां वह जाता आता था। उसके यहां उसका एक और मिलने वाला जाया करता था। बाद में सुना जाता है कि मेरे भाई से उसकी कुछ कहा-सुनी हो गयी जिसके फलस्वरूप मेरे भाई ने वहां जाना आना बंद कर दिया। कुछ दिनों बाद उसी औरत के मकान पर बड़ी संगीन फौजदारी हो गयी और उसमें दो आदमियों का कत्ल हो गया। इस संबंध में झूठमूठ उस आदमी ने मेरे भाई को फंसा दिया।'

वे सज्जन सारी बातें गौर से सुन रहे थे। बोले 'आपको पूर्णरूप से विश्वास है कि आपका भाई उस समय उस औरत के यहां न था ?

मैंने कहा 'वह तो वहां महीने भर पहिले से गया ही नहीं।'

वे थोड़ी देर चुप रह कर बोले 'किन्तु आपके पास

क्या सुबूत है कि वह वहां गया ही नहीं। आप तो बम्बई में थे उस समय ?'

मैंने कहा 'उस समय वह बम्बई में मेरे ही पास था। इस घटना के दूसरे दिन ही वह यहां से लखनऊ गया था। उसके वहां पहुंचते ही पुलिस ने उसे गिरफ्तार कर लिया। कल मेरे पास सूचना आयी है कि उस पर चार्ज शीट भी लगा दिया गया है। इसी परेशानी में भागा जा रहा हूं लखनऊ। मेरे वकील ने मुझे लिखा है कि वह इस बुरी तरह फंसाया गया है कि उसका छूटना कठिन ही है।'

कहते कहते मेरी आंखें सजल होगयीं। वे थोड़ी देर तक तो चुप बैठे रहे फिर बोले 'तबतो मामला संगीन है।'

मैं कहने लगा 'ऐसी विपत्ति में पड़ कर भला मस्तिष्क कैसे ठिकाने रह सकता है ?'

वे सिर हिलाकर बोले 'ठीक कह रहे हैं आप। मगर क्या आप बिलकुल ठीक कह रहे हैं कि आपके भाई का इसमें झूठ ही नाम लिया जा रहा ?' ?'

मुझे उन पर कुछ रोष सा आ गया। बोला 'आप भी खूब बात करते हैं। साहब। आपसे मैं बेकार क्यों झूठ बोलूंगा। आप कुछ मजिस्ट्रेट तो हैं नहीं जो आपसे बात छिपाऊं।'

वे सज्जन गंभीर होकर बैठ गये। मैं भी अपने हृदय में उलझनों का गुरुतर भार लिये लेट गया। थोड़ी देर बाद वे उठे और अपनी सीट पर तौलिया बिछाकर भोजन फैलाने लगे।

भोजन प्रारंभ करने के पहले वे बोले 'आइये थोड़ा भोजन कर लीजिये।'

मैं लेटे ही लेटे बोला 'धन्यवाद। आप खाइये। मेरी इच्छा नहीं है भोजन करने की।'

वे खाने लगे। वे खाते जाते थे और गंभीरता के साथ कुछ सोचते भी जाते थे। मैं चुपचाप लेटा रहा।

एकाएक वे बोल उठे 'आपका भाई घटना के दिन बम्बई में मौजूद था इसका कोई प्रमाण है आपके पास?

मैं धीरे से बोला 'प्रमाण बहुत हैं किन्तु उन्हें मानेगा कौन?

वे बोले 'फिर भी क्या प्रमाण है आप बतलायेंगे?'

मैंने कहा 'उस दिन हम दोनों साथ ही सिनेमा गये थे। वहां न जाने कितने लोगों से हम लोगों की भेंट हुयी थी।'

उन्होंने कहा 'यह कोई प्रमाण नहीं है। कोई तगड़ा प्रमाण तो बतलाइये।'

मैं थोड़ा देर चुप रहकर बोला 'तगड़ा प्रमाण तो केवल ईश्वर है।

वे झट बोल उठे 'किन्तु ईश्वर तो गवाही देने आयेगा नहीं।'

मैंने कहा 'वह भले ही गवाही देने न आये किन्तु मैं तो ईश्वरवादी हूं। मजिस्ट्रेट की अदालत में भले ही अन्याय हो किन्तु उसके दरबार में अंधेर नहीं है।'

वे खाना खाते खाते थोड़ी देर बाद फिर बोले 'ईश्वर के दरबार में अंधेर तो नहीं है किन्तु मजिस्ट्रेट बेचारा क्या करे ? उसे भी तो प्रमाण चाहिए।'

मैं बोला 'ईश्वर की कृपा से हमारी पांच लाख की पैतृक सम्पत्ति है। हम दोनों ही बराबर के हिस्सेदार हैं। उसके न रहने से सारी सम्पत्ति मेरी हो सकती है। लोगों ने मुझे यह भी समझाने का प्रयत्न किया कि तुम्हारा तो कांटा दूर हो रहा है तुम क्यों परेशान हो रहे हो। किन्तु आप ही बतलाइये बैरिस्टर साहब कि निर्दोष व्यक्ति को फांसी पर लटकवा कर सम्पत्ति लेना कहां तक न्यायसंगत है।'

वे गौर से मेरा मुंह देखते हुए बोले क्या आपके भाई के और कोई नहीं है ?'

मैंने कहा 'अभी तो उसका विवाह भी नहीं हुआ है।'

फिर कुछ बात नहीं हुयी। वे भोजनादि के पश्चात् लेट कर आराम करने लगे।

थोड़ी देर बाद वे बोले 'तो क्या अपने लड़के की जन्म-पत्र आप मुझे दे सकते हैं ?'

मुझे उनका यह प्रश्न कुछ असंगत तथा स्वाभाविक सा मालूम दिया। मैं तो विपत्ति में पड़ा हुआ हूं और इन्हें विवाह की सूझ रही है 'देखा जायगा।'

वे चुप रहे। उन्होंने धीरे से कम्पार्टमेन्ट की बत्ती बुझा दी और सोने का उपक्रम करने लगे। मैं अपनी चिन्ताओं में फिर निमग्न हो गया। मुझे एक क्षण भी नींद न आयी। कभी बैठता तो कभी बत्ती जलाकर कुछ पढ़ने की चेष्टा करता। कभी सीट पर चुपचाप लेट जाता और बेचैनी के साथ करवटें बदलता रहता।

एकाएक उठकर उन्होंने बत्ती जलायी और बोले 'आप अभी तक सोये नहीं ? आप व्यर्थ में इतनी चिन्ता कर रहे हैं। अभी तो केस प्रारम्भ भी नहीं हुआ।'

एक लम्बी सांस लेकर मैं बोला 'क्या करूं चिन्ता पीछा ही नहीं छोड़ती मेरा।'

वे बोले 'आप घबड़ाइये नहीं। आपका भाई छूट जायगा।'

मैं सूखी हंसी हंस कर बोला 'यह तो मन समझाने की बात है बैरिस्टर साहब। ऐसा सोच कर चिन्ता से छुटकारा थोड़े ही मिल जाता है।'

वे चुपचाप फिर लेट गये। बत्ती जलती रही।

थोड़ी देर बाद वे फिर बोले 'आपके भाई का नाम क्या है ?'

मेरा मन अब बात करने से ऊब रहा था। जब हृदय चिन्ताओं से बोझिल होता है तो कभी कभी मौन रहने को जी चाहता है। मैंने कहा 'उसका नाम ज्ञान-प्रकाश कपूर है।'

'हूं' कह कर वे सज्जन चुप हो गये।

लगभग दो बजे रात के पश्चात् मुझे नींद आयी। सबेरे जब नींद खुली तो गाड़ी भोपाल के स्टेशन पर खड़ी थी। सामने बर्थ के पास लगे हुए तख्ते पर दोनों आदमियों के लिए चाय-नाश्ता लगा हुआ था।

मेरी ओर चाय का प्याला बढ़ाते हुए उन्होंने कहा 'लीजिए चाय पीजिए। आप तो खूब सोये। चार बजे सबेरे एक सज्जन आपसे मिलने आये थे। आपको सोता देखकर चले गये।'

मैंने आश्चर्य के साथ पूछा 'कौन सज्जन थे ? उन्होंने मुझे जगाया क्यों नहीं ?'

वे मुसकुराते हुए बोले 'उन्होंने अपना नाम ईश्वर बतलाया था। वे यह कहने आये थे कि मैं आपको गवाही देने को तैयार हूं।'

मुझे यह बेतुका परिहास अच्छा न लग रहा था। मैं मुंह बना कर चाय पीने लगा।

वे हंस कर बोले 'क्या आपको मेरी बात का विश्वास नहीं है। मैं सच ही कह रहा हूं। आपका भाई तो अब समझ लीजिये छूट ही गया। इसी खुशी में मैं आपको चाय पिला रहा हूं।'

मैं चुप रहा। वे बोले 'आप बड़े ईश्वरवादी बनते हैं पर मैं देख रहा हूं कि आपका ईश्वर पर कतई विश्वास नहीं है। क्या आप मेरी बात झूठ समझ रहे हैं ?'

मैंने कह दिया 'आपकी बात ही इतनी बेतुकी है।'

वे बोले 'मेरी बात भले ही बेतुकी हो किन्तु जो कुछ मैं कह रहा हूं वह बिल्कुल ठीक है। आपके भाई का मुकद्दमा मि० राधाकान्त की इजलास में पेश है और उस औरत का नाम फूलकुमारी है। ठीक है न ?'

मैं आश्चर्य से उनके मुंह की ओर देखता हुआ बोला 'आपको यह सब कैसे मालूम हुआ ?'

वे कहते गये 'पहिले यह बतलाइये कि जो कुछ मैं कह रहा हूं वह सब ठीक है या नहीं ?'

'जी हां' मेरे मुंह से निकल गया।

वे हंसते हुये बोले तब तो आपका भाई समझ लीजिए कि छूट ही गया।

मैं आश्चर्य के साथ उनके मुंह की ओर ही देख रहा था। वे आनन्द के साथ टोस्ट का टुकड़ा मुंह में रखते हुए बोले 'अब तो आपकी चिन्ता दूर हुयी।

बोलिये अपने लड़के का जन्म-पत्र आप कब तक भेज रहे हैं ?'

मैंने कहा 'मगर.....।'

बात काट कर वे बोल उठे 'इस अगर मगर को अब तो छोड़िये।'

'मगर इन सब बेकार की.....।'

वे बोल उठे 'देखिये अगर आपने 'अगर मगर' जारी रखा तो मैं आपके भाई को कभी न छोड़ूंगा।'

मैं उन्हें गौर से देखते हुए बोला, 'मगर.....।'

वे झट बोल उठे मगर मैं ही राधाकान्त मजिष्ट्रेट हूं। इस बार आपको क्षमा करता हूं। अगर आपने फिर 'अगर-मगर' लगाया तो आप पर अदालत की मान-हानि का दावा कर दूंगा।'

कह कर वह 'ही-ही' करके हंसने लगे।

मैं अचम्भे में भर कर बोला 'आप राधाकान्त जी हैं क्या ?'

वे स्फुट-स्वर में बोले 'जी-जी-जी'। मैं राधाकान्त बल्द रमाकान्त कौम खत्री एडिशनल डिस्ट्रिक्ट जज लखनऊ हूं।'

मैं उनका मुंह देखता रह गया।

वे हंसते हुये बोले 'आपका काम हो गया। अब मेरी भी चिन्ता दूर होना चाहिए। बोलिये कब जन्म-पत्र भेज रहे हैं ?'

मेरे चेहरे पर मुसकुराहट आ गयी थी।

★

मंगू पंसारी

[१]

प्लेटों और तश्तरियों की खनखनाहट विभिन्न प्रकार के खाद्य पदार्थों की सुगन्धि तथा उच्च श्रेणी के सुवेषित नर-नारियों की हंसी-वार्ता के बीच भी मेरी दृष्टि निरंतर उसी स्थान की खोज में रहती है जहां मैली धोती और फटी सी बनियाइन पहिने हुए मंगू पंसारी बड़ी अकड़-फूं के साथ बैठा सौदा तौला करता था। दिन भर बिक्री के आधिक्य के कारण कदाचित् ही मंगू को कभी दम लेने की फ़ुरसत मिलती हो। अब तो

मंगू पंसारी की उस छोटी सी दूकान के स्थान पर एक विशाल अट्टालिका बन कर खड़ी हो गयी है। इस अट्टालिका में एक सुन्दर सा रेस्तरां खुल गया है जिसकी चहल-पहल रौनक और प्रसिद्धि ने सारे नगर को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया है।

मैं रेस्तरां के बाहर आ गया। मेरी आखें मंगू पंसारी के किसी साथी की खोज में इधर-उधर घूमने लगीं।

सामने पूड़ी वाले चौबे जी की पुरानी दूकान यथावत् चल रही है। चौबे जी के स्थूल और चिकने शरीर में यद्यपि सलवटें पड़ गयी हैं किन्तु मैं उन्हें पहिचान सका।

ग्राहक को सामने देखते ही चौबे जी की पुरानी और पहिचानी वाणी सुनने को मिल गयी। 'आइये बाबू जी खालिस घी का माल सिर्फ चौबे जी की ही दूकान पर मिलेगा। पूड़ी-कचौड़ी रायता—और क्या नाम के—तीन तरह का साग और साथ में पानी फ्री। कितनी कचौड़ियां दूं ?'

मैं धीरे से बोला 'मुझे पहिचाना चौबे जी आपने ?'

बिना मेरी ओर देखे ही दोने में साग सजाते हुए चौबे जी कहते गये 'सो क्यों नहीं। पहिचानता मैं सारे शहर भर को हूं। आइये अंदर निकल आइये। आठ कचौड़ियां रक्खूं न ?'

मैं धीरे से दूकान के अंदर जाकर पुरानी सी लोहे की कुरसी पर बैठ गया। चौबे जी ने फौरन साग का दोना मेरे सामने लाकर रख दिया।

खाते-खाते मैं बोल उठा 'यहां सामने मंगू पंसारी की दूकान थी चौबे जी ?'

जनेऊ संभालते हुये चौबेजी बोले 'अरे वह मंगुआ ? हां थी तो। साला अपनी करनी का फल पा गया। किसी से सीधे मुंह बात न करता था। चार कचौड़ियां और दूं ?

थोड़ी देर बाद मैंने फिर पूछा 'उसकी दूकान तो खूब चलती थी ? बंद कैसे हो गयी ?'

चौबे जी पत्तल पर आठ-दस कचौड़ियां और पास में लाकर बोले 'चार दे दूं न ? ले लीजिये बाबू जी। चौबे जी की कचौड़ियां चूरन का काम करती हैं।'

मैंने हाथ उठाकर रोकने का उपक्रम करते हुये कहा 'न—न—न अच्छा दो कचौड़ियां.....

तब तक चौबे जी ने चार डाल ही दीं। बोले 'वैसे मंगू बुरा न था किसी का सौदा कम न तौलता था। दो-चार पेड़े दूं बाबू जी ? मथुरा के पेड़े मात हैं।'

[२]

आज से बीस वर्ष पूर्व जब मैं चालीस रुपये वेतन पर लखनऊ के एक प्रेस में नौकरी करने आया था तब चार रुपया मासिक भाड़े पर एक कोठरी लेकर इसी

मुहल्ले में ठहरा था। उस जमाने में पैसे-पैसे की तंगी के कारण मंगू पंसारी के यहां से रोज आटा दाल चावल लेना पड़ता था। दूकान पर इतनी भीड़ रहती थी कि कभी-कभी आध घंटे तक खड़े रहना पड़ता था। मंगू के यहां बात करने की गुंजाइश न थी। जो कुछ भी वह दे चुपचाप ले जाओ। बात की नहीं कि गल्ले से पैसा वापिस निकाल कर फेंका नहीं। अगर सामान लेना है तो चुपचाप खड़े रहो।

इसी विषय को लेकर मेरी उससे एक बार झड़प भी हो गयी थी। मैं अकड़ कर बोला 'क्या मुफ्त में दे रहे हो ? यह खूब रही।'

दूसरे ग्राहक का सौदा तौलता हुआ मंगू बोला 'जहां ठीक मिलता हो वहां से ले आइये।'

मैं चुप रहा। सोचा कल से दूसरे के यहां से सौदा खरीदूंगा। किन्तु निभी नहीं। दाल में कंकड़ मिले—आटे में पिस्सू और चावल में सूड़ियां। अंत में फिर उसी मंगू के यहां से बराबर सामान खरीदना पड़ा। चीज बढ़िया और तौल नाप ठीक। उस दिन से मंगू का व्यवहार भी मेरे प्रति कुछ नरम हो गया।

चार मास बाद ही नौकरी छूट गयी। महीने भर तक तो किसी प्रकार काम चल गया किन्तु आगे गाड़ी न बढ़ सकी। जब पैसे हों पास न रहे तो साग-सत्तू पर नौबत आ गयी।

विपत्ति के समय जो घबड़ाता नहीं—दूसरे के सामने हाथ नहीं पसारता तथा अपना भरम अपने ही में छिपाये घुलता रहता है वही तो मनुष्य है। प्रायः लोग विपत्ति पड़ते ही अपनी दयनीय दशा का चित्रण दूसरे के सामने करने में न हिचकते हैं और न शरमाते हैं। ऐसे समय में दूसरों से धन मांग कर अपनी आवश्यकतायें पूरी करने की उनकी आदत सी पड़ जाती है।

किन्तु मैं प्रारंभ ही से आत्माभिमानी हूं। भूखे रह कर भी किसी के सामने जिह्वा न खोलने का मेरा स्वभाव है। कर्म पर विश्वास रखने वाले प्रायः ऐसे ही होते हैं। मांगना अकर्मण्यों का ही पेशा है।

उस दिन कदाचित् हम लोग उपवास ही कर रहे थे कि नीचे से किसी ने आवाज दी।

अपनी भूखी आकृति को बनावटी मुसकान से लपेटता हुआ मैं नीचे आया।

देखा तो, मंगू पंसारी।

मुझे देखते ही उसने कहा 'सौदा लेने नहीं आते बाबूजी। क्या नाराज हो गये ?'

मैं सिटपिटा सा गया। बोला 'नहीं-नहीं नाराज होने की कोई बात नहीं है। बात यह है कि.....'

मंगू कदाचित् मेरी बात सुनना न चाहता था। बोला 'बड़ी भीड़ हो जाती है बाबूजी दूकान पर। इसी से शायद आप लोग चक कर नाराज हो जाते हैं।'

मैं चुप रहा। मंगू बोला 'आज आप कुछ सुस्त मालूम पड़ रहे हैं बाबूजी। बात क्या है।'

मैं बोल उठा 'क्या बताऊं ? इधर महीने भर से ज्यादा हुआ नौकरी छूट गयी है। अभी तक कहीं दूसरी जगह नौकरी ठीक नहीं हुई।'

मंगू धीरे से बोला 'तो इसमें घबड़ाने की क्या बात है बाबूजी ? मिल ही जायगी महीने-बीस दिन में। आप चिन्ता क्यों करते हैं ?'

मंगू चला गया।

दूसरे ही दिन सबेरे मंगू का नौकर या कोई भाई-बन्धु ही उसका बहुत सा सामान लेकर मेरे घर पहुंचा। छोटी-छोटी बोरियों में आटा दाल चावल आदि भरा हुआ देख कर मैं साश्चर्य पूछ बैठा 'यह सब क्या है ?'

वह बोला 'यह, १५ दिन का सामान है। अभी घी मसाला और तेल मैं दे जाऊंगा। साहजी ने कहा है कि दाम की कोई फिकर नहीं है। जब नौकरी लग जाय तब सहूलियत से भेज दीजियेगा।'

मैं स्तब्ध सा खड़ा रह गया। सीधे मुंह बात न करने वाला यह मंगू अपने चिड़चिड़े स्वभाव और फटे वस्त्रों के अंदर इतना सुन्दर हृदय रखता है।

[३]

बात आयी-गयी हो गयी। लगभग आठ महीने तक मंगू का सधार सामान खाते-खाते अब मैं ऊब गया और

नौकरी न मिली तो मुझे लखनऊ छोड़ देना पड़ा। मंगू के लगभग ढाई सौ रुपये देने थे। बिना रुपये दिये शहर छोड़ना मुझे अच्छा न लग रहा था किन्तु इसके सिवा कोई चारा भी न था। अंत में एक दिन रात्रि के समय मंगू से आंखें बचाकर लखनऊ से मैं भाग खड़ा हुआ। ऐसा करते हुए मुझे बड़ी ग्लानि हो रही थी किन्तु फिर करता ही क्या ?

किन्तु लखनऊ छोड़ना कदाचित् वरदान ही सिद्ध हुआ। प्रयाग पहुंच कर व्यवसाय का कुछ ऐसा सिलसिला बैठा कि सारे कष्ट दूर होकर पास में चार पैसे हो गये। इस बीच कई बार लखनऊ भी गया किन्तु समय के अभाव के कारण न तो मंगू से मिल ही सका और न उसके पैसे ही दे सका।

आज उसी मंगू को मेरी आंखें ढूंढ़ रही हैं। मैं उसके रुपये देकर उस भार से मुक्त हो जाना चाहता हूं।

किन्तु मंगू क्या उसकी दूकान का चिन्ह तक शेष नहीं है।

पूड़ी वाले चौबेजी से निराश होकर मैंने इधर-उधर उसके विषय में पूछ-ताछ, प्रारम्भ की।

सामने वाले होटल के मैनेजर ने बतलाया 'मंगू अब इस संसार में नहीं है। मरने के वर्ष भर पहिले ही से उसकी आर्थिक दशा बड़ी शोचनीय हो गयी थी।

मैंने कुतूहल के साथ पूछा 'किन्तु उसकी दूकान तो खूब चलती थी उसका हुआ क्या था ?'

मैनेजर ने बतलाया 'मंगू का बहुत सा रुपया ग्राहकों पर डूब गया। रुपया बाकी करके मांगने का उसका स्वभाव न था। बहुत से बाबुओं को जिनकी नौकरियां छूट गयी थीं वर्षों, उसने मुफ्त में सौदा खिलाया। न जाने कितना रुपया उसका इस प्रकार डूब गया। आप ही बतलाइये बाबूजी कि आजकल लेकर कौन देता है ? मंगू बेचारा इसी झंझटों में मारा गया। अंत में उसकी सहायता किसी ने न की। दो सौ रुपये के लिए उसकी दूकान नीलाम हो गयी।'

मैंने एक लम्बी सांस ली। मैनेजर कहता गया 'मंगू बेचारा बेरोजगार हो गया। कुछ दिनों तक इधर-उधर मारा मारा फिरता रहा अंत में पंद्रह रुपये की नौकरी कर ली। खरे स्वभाव का होने के कारण वहां भी उसकी पटी नहीं। अंत में धनाभाव के कारण बाल-बच्चों को लेकर वह गांव भाग गया। सुना कि मरने के पहिले वह बीमार था। गरीब को ठीक से दवा भी तो नसीब न हुयी।'

मेरा हृदय बैठा सा जा रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि मंगू की मृत्यु का कारण मैं भी हूं। कुछ देर चुप रहकर मैंने कहा 'उसके कोई है भी ?'

मैनेजर ने कहा 'बाल-बच्चे तो उसके सामने ही जाते रहे थे। उसकी स्त्री गांव में मौजूद है। सुना है कि वह भी बड़े बुरे दिन काट रही है।'

गांव का पता पूछता हुआ मैं मंगू की स्त्री के पास पहुंच ही गया।

जीर्ण-शीर्ण दशा में एक स्त्री 'खों-खों' करती हुई निकल कर बाहर आयी।

मुझे देखते ही वह बोली 'किसे पूछते हो ? यहां अब कोई नहीं है।'

मैं साहस करके बोला 'मंगू के रुपये.....।'

बीच में सिंहनी की भांति वह गरज कर बोली 'तुम झूठ बोलते हो। उस पर किसी का पैसा कभी बाकी नहीं रहा। वह मर्द आदमी था। किसी का लेकर नहीं मरा। किसी का लेकर मरने वाले को चौदह दफे नरक जाना पड़ता है। वह तो सुरग गया है।'

मैं कांप उठा। मैंने नोटों का पुलिन्दा स्त्री की ओर बढ़ाते हुये कहा 'बात यह है कि मुझे उसके रुपये देना थे.....।'

वह बीच ही में बोल उठी 'न-न-न मैं रुपये-उपये नहीं लेती। वह मरते वखत कह गया है कि उसे किसी से कुछ लेना नहीं है। नेकी करके कुएं में डाली जाती है। तू कभी किसी से कुछ ले मत लेना। नहीं तो मैं तरग से नरक में ढकेल दिया जाऊंगा।'

मैं कुछ खीज कर बोला 'मुझे उसके ढाई सौ रुपये देना थे।'

स्त्री फौरन बोल उठी 'मगर उसने कहा था कि मुझे किसी से एक पाई भी नहीं लेना है। उपकार का बदला नहीं लिया जाता। आप क्षिमा करें। मेरे पास खाने-पीने को बहुत है।'

और वह लपक कर घर के भीतर हो गयी।

मैं थोड़ी देर तक खड़ा रहा फिर धीरे से लौट गया।

× × ×

मंगू के वे ढाई सौ रुपये मेरे जीवन को भार बनाये हुए हैं। उसकी स्त्री के वो वाक्य क्या कभी मैं भूल पाता हूं.....?

'किसी का लेकर मरने वाले को चौदह दफा नरक जाना पड़ता है। वह तो सुरग गया है।'

'उपकार का बदला नहीं लिया जाता।'

*

★

दिल्ली की रानी

[१]

महमूद पराजित सा खड़ा हुआ था।

कुलसुम ने तिरस्कारपूर्ण दृष्टि से उसकी ओर देखते हुए कहा 'फिर कभी ऐसी हिम्मत न करना महमूद।'

महमूद ने प्रार्थना भरी करुण दृष्टि से एक बार फिर कुलसुम की ओर देखा और चुपचाप खड़ा रहा।

कुलसुम ने फिर कहा 'तुम अब्बाजान के जर खरीद गुलाम हो महमूद। तुमने क्या समझ कर.....

महमूद का मुंह खुला 'मुआफ़ कीजिये। आयन्दा ऐसी खता कभी न होगी।'

कुलसुम के चेहरे पर साधारण भाव लौट आये। उसे महमूद की बात का एकाएक विश्वास न हुआ। वह जानती थी कि महमूद उसे कितना चाहता है।

महमूद थोड़ी देर खड़ा रहा और फिर धीरे से डेरे के बाहर हो गया। कुलसुम उसकी ओर देखती रही जब तक वह आंखों से ओझल न हो गया।

उसके जाने के बाद कुलसुम के मुंह से निकला 'बेचारा...लेकिन...भला यह कैसे हो सकता है ?'

× × ×

पंजाब के उस भाग में जिसे अब मांटगुमरी का इलाका कहते हैं दिलेरखां अपनी बेटी कुलसुम के साथ रहता था। हम जिस समय की बात कह रहे हैं उस समय वहां न तो मांटगुमरी का जिला ही था और न किसी प्रकार की बस्ती ही थी। उस सुनसान जंगल में कच्ची मिट्टी का एक छोटा सा घर बनाकर दिलेरखां रहता था। लोग कहते हैं कि किसी जमाने में वह एक डाकू था तथा गजनी से आकर हिन्दुस्तान की सरहद पर बस गया था। पश्चिमोत्तर प्रान्त से भारत आने वाले यात्री उसके मकान पर ठहर कर...कुछ गुप्त मंत्रणा करके...आगे पूर्व की ओर भारत की राजधानी दिल्ली पहुंचते थे। वर्षों पहिले जब गजनी का अमीर सुलतान

महमूद हिन्दुस्तान में घुस आया तथा भारत के मरुस्थल को रौंदता हुआ गुजरात के सुप्रसिद्ध देवस्थान सोमनाथ का मंदिर तोड़कर असंख्य धनराशि लूट ले गया था तब से मुसलमानों की ललचाई हुयी आखें इसी देश पर केन्द्रित होकर उन्हें लूटपाट के लिए उकसाती रहती थीं। उनके गिरोह के गिरोह दिल्ली के आसपास पंजाब में चक्कर लगाते रहते थे। 'दिल्ली में क्या हो रहा है.....' 'अजमेर का राजा कितना शक्तिशाली है.....' कन्नौज-नरेश के पास कितनी सेना और युद्ध-सामिग्री है ? 'इन समाचारों को गजनी और गोर तक पहुंचाना इनका मुख्य कार्य रहता था। ये लोग सौदागर और बटोही बनकर चक्कर काटा करते थे। दिल्ली के सुदूर पश्चिम में बसने वाली हिन्दू जनता गजनी के अमीर के आक्रमण को याद करके अब भी भय से कांप उठती थी किन्तु सौदागर और बटोहियों के वेष में घूमने वाले इन कथित लुटेरों को किसी प्रकार छेड़छाड़ करते न देख वे शान्ति की सांस लेते थे।

दिलेर खां भी इसी प्रकार का एक व्यक्ति था। उसे भारतवर्ष आये काफी अरसा हो चुका था और इस प्रकार के लुटेरों को अपने यहां विश्राम के लिए ठहरा कर उसने पर्याप्त धन संचित कर लिया था। उसकी एक मात्र संतान कुसुम पिता के साथ रहकर उसका हाथ बटाती रहती थी।

महमूद दिलरखां का खरीदा हुआ गुलाम था। वह विश्वासपात्र भृत्यु था तथा जब दिलेरखां सप्ताहों के लिये इधर-उधर चला जाता था तब वह मालिक के स्थान पर जम कर काम करता था। कहना अनुचित न होगा कि भारत पर आक्रमण करने वालों के गुप्तचरों का यह अच्छा-खासा अड्डा और मंत्रणा-गृह था।

महमूद सत्ताइस वर्ष का युवक था और सोलह वर्ष की अवस्था वाली सौंदर्य से पूर्ण कुलसुम की ओर उसका आकर्षित हो जाना आश्चर्य की बात न थी। उसे विश्वास था कि उसके मालिक की कन्या निश्चितरूप से उसकी ओर आकर्षित है।

किन्तु कुलसुम ऐसा न समझती थी। यद्यपि युवक महमूद में उसके लिए काफी आकर्षण था किन्तु उसे गुलाम समझ कर कुलसुम उसे घृणा की दृष्टि से देखती थी। उस दिन जब महमूद ने उसके सामने अपना संचित प्रेम उंडेल कर रखने की चेष्टा की तो कुलसुम पहिले तो मन ही मन मुसकुराई। वह बहुत दिनों से महमूद का प्रेम समझ रही थी। आज महमूद का साहस देखकर उसने सदा के लिये विराम लगा देने का निश्चय कर उसे करारी फटकार बतलाई। महमूद...कुलसुम का सच्चा प्रेमी .जी मसोस कर रह गया।

किन्तु कुलसुम.....?

वह महमूद के प्रेम की गहराई समझती थी किन्तु उसे ठुकरा देने में भी उसने गौरव अनुभव किया। वह दिलेरखां की लड़की थी। गुलाम की क्या हस्ती जो उसका पति बनने का हौसला रक्खे ?

और महमूद.....?

मूक प्रेमी की भांति जीवन-यापन करने में अपना सौभाग्य समझने लगा।

क्या कभी उसका भाग्य भी.....?

[२]

युवक काफी थक चुका था। आश्रय लेने के लिये उसकी दृष्टि उस सुनसान और अंधकार-ग्रसित मैदान को पार करने लगी।

एक दीपक सुदूर पर टिमटिमाता दिखलायी दिया।

कदाचित् वह दिलेर खां की सराय थी। अंधकार को चीरता हुआ साहसी युवक पहुंच गया। सराय के द्वार पर सन्नाटे में आवाज देते ही एक युवती द्वार पर आकर खड़ी हो गयी।

वह कुलसुम थी।

'आप कौन ?'

'एक भटका हुआ बटोही। क्या आश्रय मिल सकता है ?' युवक ने उसके सौंदर्य पर नेत्रों को न्योछावर करते हुये कहा।

'अब्बा जान घर पर नहीं हैं' कुलसुम ने बटोही पर आंख जमाते हुये कहा।

युवक चुपचाप खड़ा रहा। कुलसुम ने कदाचित् इसके पहिले इतना सुंदर और गठीला जवान न देखा था। कुछ सोच कर बोली 'अच्छा। अंदर आ जाइये।'

कुलसुम ने द्वार के एक ओर हटते हुये युवक को मार्ग दे दिया।

युवक अंदर चला गया।

× × ×

युवती कुलसुम ने कहा 'हिन्दुओं के ठहरने की यह जगह नहीं है। सबेरे तड़के ही तुम्हें.....'

युवक थोड़ी ही देर में कुलसुम के अधिक निकट आ गया था। कुछ ठहर कर बोला 'ऐसा क्यों ?'

उसके भोलेपन पर मुग्ध होती हुयी कुलसुम बोली 'तुम बड़े भोले हो मुसाफिर। और तभी तो.....'

धीमे स्वर में वह बोली 'तुमने इतनी देर में ही मेरे दिल में घर कर लिया। जी चाहता है तुम्हें सब कुछ बता दूं।'

युवक के कान खड़े हो गये। वह बोला 'मैं तो मुसाफिर हूं। सबेरे चला जाऊंगा। आज रात भर के लिए मैं तुम्हारा ही तो हूं सुन्दरी। मैं.....'

युवक चुप हो गया। कुलसुम ने फिर जी भर कर

एक बार युवक को देखा और सोचा 'अकेली रात..... सन्नाटा.....और यह सजीला युवक.....और फिर सबेरे ही चला जायगा .....'

उसने सहसा युवक की गोद में अपना सिर डाल दिया।

थोड़ी देर तक दोनों आलिंगन-पाश में थे।

और घंटे भर बाद.....

युवक ने कुलसुम की कुन्तल राशि पर अपना सुडौल हाथ फेरते हुए धीरे से कहा 'अब क्या फिर कभी हम मिल सकेंगे इस जीवन में इस रात के बाद ?'

कुलसुम को मानों भूली सी बात याद आ गयी। वह बोल उठी 'फिर कभी ऐसी हिम्मत न करना जवान। यह जगह हिन्दुओं के लिये कब्रिस्तान है।'

युवक सिहर उठा। साहस करके बोला 'ऐसा क्यों है प्यारी कुलसुम ?'

कुलसुम क्षण भर चुप रह कर बोली 'अद्भुत जल्द दिल्ली के बादशाह पर मुसलमानों की चढ़ाई होगी। गजनी और गोर से जो गिरोह दिल्ली में भेद लेने के लिए जाते हैं उनके ठहरने का अड्डा है यह। अब समझ गये न ?'

युवक मन ही मन कांप गया। 'तो क्या दिल्ली पर शीघ्र ही हमला होगा ?'

कुलसुम बोली 'मेरे अब्बाजान ही इस अड्डे के मालिक हैं। तीन दिन से वे दिल्ली में भेष बदल कर गये हैं। न जाने कब लौटें ?'

कुछ सोच कर युवक बोला 'और क्या दिल्ली का बादशाह उसका मुकाबिला न करेगा ?'

कुलसुम बोली 'सुना है कि दिल्ली के बादशाह की बेगम बड़ी खूबसूरत है। बादशाह उसी के इश्क में गाफिल रहता है। ऐसी हालत में उसकी सलतनत को मिसमार कर देना हमारे लिये कुछ मुश्किल न होगा।'

युवक चुप रहा। कुलसुम ने उसके दोनों कंधों पर अपने दोनों हाथ रखते हुये कहा 'तुमने दिल्ली की बेगम को देखा है क्या ?'

युवक मुसकुरा कर बोला 'हां। वह ठीक तुम्हारी ही तरह है कुलसुम।

कुलसुम उसके वक्षस्थल पर अपना सिर रगड़ते हुये बोली 'रहने भी दो। कहां मैं और कहां दिल्ली की बेगम ?'

युवक ने हंसते हुये कहा 'थोड़ी देर के लिये अपने ही को दिल्ली की बेगम समझ लो न कुलसुम।'

कुलसुम मुसकुरा कर बोली 'मैं दिल्ली की बेगम। ऐसा ख्वाब में भी नामुमकिन है।'

'तुम सचमुच ही दिल्ली की बेगम हो कुलसुम।' कहकर युवक हंसा।

'अयं' ! कहकर कुलसुम युवक से अलग हट गयी ।

सामने महमूद खड़ा हुआ दोनों की ओर घृणा और क्रोध की दृष्टि से देखता हुआ कांप रहा था ।

युवक उठ कर खड़ा हो गया । महमूद ने नंगी तलवार निकाल ली ।

कुलसुम दौड़ कर महमूद से चिपट गयी और बोली 'मैं इसे प्यार करती हूं महमूद ! तुझे इन्हें बचाना ही पड़ेगा ।'

प्यार भरे दिल को अंदर ही दबाते हुए धीरे से महमूद बोला 'कुलसुम.....।'

कुलसुम उसकी ओर याचना भरी दृष्टि से देख रही थी ।

[३]

युवक दो दिन वहीं ठहरा रहा । कुलसुम उसे छोड़ने की कल्पना करते ही पागल हो उठती थी । महमूद उसकी दशा देखता और लम्बी सांस लेकर चुप रह जाता ।

अंदर युवक कुलसुम से कह रहा था 'आज मैं चला जाऊंगा कुलसुम ।'

उससे चिपटती हुयी कुलसुम ने कहा 'तुम जा न सकोगे पशुपत । यदि जाना ही है तो मुझे ले चलो साथ में । तुमने वादा किया है.....

युवक बोला 'ऐसा कैसे हो सकता है कुलसुम ?'

उसकी बातों से कुलसुम का दिल टूटा सा जा रहा था। वह पागलों की भांति चिल्ला कर बोली 'ऐसा कभी न हो सकेगा बेरहम ! तुम न जा सकोगे। तुम न जा सकोगे पशुपत !!'

बाहर युवक का घोड़ा तैयार खड़ा था। उस पर चढ़ते हुए वह बोला 'पागल न बनो कुलसुम। मुझे जाने दो। तुम्हारे अब्बाजान शायद आने ही वाले हैं।'

कुलसुम रोती हुयी बोली 'आने दो उन्हें वे कुछ न कहेंगे।'

युवक चलने को हुआ। कुलसुम चिल्लायी 'दगाबाज ! आखिर को तो तू काफिर ही है न ? कमीना।'

युवक घोड़े पर चढ़ चुका था। कुलसुम स्फुट-स्वर में चिल्लायी 'महमूद ! महमूद !! पकड़ो इसे... पशुपत.....पशुपत.....'

महमूद युवक की ओर लपका। युवक नंगी तलवार निकालता हुआ बोला 'खबरदार, मैं पशुपत नहीं हूं बेवकूफ लड़की। मैं दिल्लीपत हूं।'

कुलसुम और महमूद एक साथ कह पड़े 'दिल्लीपत ! दिल्लीपत !! दिल्ली का बादशाह !!!'

'हां। दिल्लीपत.....दिल्ली का बादशाह...राय पिथौरा... पृथ्वीराज। दो दिन की दिल्ली की बेगम साहिबा...सलाम।'

और मिनटों में घोड़ा आंखों से ओझल हो गया।

कुलसुम पागलों की तरह स्तब्ध होकर खड़ी रही। फिर महमूद से लिपट कर फूट पड़ी 'महमूद ! महमूद !! महमूद !!!'

महमूद सिर हिलाता हुआ बड़ी देर तक कुछ सोचता रहा। फिर उसके मुंह से निकला 'दिल्ली का बादशाह। दिल्ली की बेगम.....अच्छा.....ऊंह.....दिल्ली की बेगम.....हां.....हूं.....अच्छा.....'

कुलसुम अचेत सी हो रही थी। प्रेम से उसके सिर पर हाथ फेरते हुए महमूद ने कहा 'मेरी कुलसुम..... दिल्ली की बेगम...अच्छा...

और कुलसुम क्रोध, क्षोभ, लज्जा और अपमान से अचेत होकर महमूद के हाथों में रह गयी।

महमूद ने उसे संभाल लिया।

[४]

दो वर्ष बाद.....

दिलेर खां की सराय के फाटक के सामने राजसी ठाठ से सजा हुआ एक युवक घुड़सवार आकर खड़ा हो गया। वह अस्त्र-शस्त्र से सुसज्जित था।

वह धीरे से घोड़े पर से उतर कर भूमि पर आ गया। दिलेर खां पास ही चौकी पर बैठा हुआ हुक्का पी रहा था। इस प्रकार एक शाही घुड़सवार को देखते ही वह चौंक कर आदाब बजाने के लिए उठ खड़ा हुआ।

किन्तु यह क्या ? घुड़सवार पर नजर पड़ते ही वह जोर से कह पड़ा 'तुम । कौन ? महमूद ।'

झुक कर दिलेर खां को सलाम करते हुये महमूद ने कहा 'जी हुजूर । मैं हूं आपका ही गुलाम महमूद ।'

लगभग डेढ़ वर्ष से अधिक हुआ महमूद एकाएक उसके घर से गायब हो गया था । दिलेर खां ने गुलाम की बड़ी तलाश की किन्तु कहीं पता न चला ।

महमूद बोला 'मेरा कुसूर मुआफ़ हो मेरे आक़ा ।'

दिलेर खां समझ गया था कि महमूद अब किसी बादशाह की फौज का उच्चाधिकारी हो गया है । बोला 'कोई बात नहीं महमूद । अच्छी तरह तो हो न ?'

महमूद अदब के साथ बोला 'आपकी दुआ है आक़ा । मैं आपकी मेहरबानी से अब गोर के अमीर का सिपह-सालार हूं । आपका कर्ज अदा करने आया हूं आज ।'

कहकर कमर में लगी हुयी एक छोटी सी थैली महमूद ने निकाल कर दिलेर खां के पैरों के पास रख दी ।

गद्गद् होकर दिलेर खां बोला 'आज से तुम आजाद हुये महमूद ।'

महमूद सीना तान कर बोला 'जल्द ही दिल्ली के गाफिल बादशाह पर हमारी चढ़ाई होगी मालिक । अल्लाह हमारी मदद करेगा ।'

कुछ गंभीरता के साथ दिलेर खां ने कहा 'लेकिन दिल्ली के बादशाह को तुम कमजोर समझने की गलती न करना महमूद। मैं जानता हूं कि इधर दो साल से वहां भी लड़ाई की तैयारियां बड़े जोर-शोर के साथ हो रही हैं। दिल्ली का बादशाह अब गाफिल नहीं रहा। संभल कर कदम उठाना।'

महमूद बोला 'हमारा अल्लाह मालिक है। यह लड़ाई अब होकर ही रहेगी।'

दिलेर खां बोला 'आओ अंदर चलो महमूद। कुलसुम तुमको अक्सर याद करती रहती है महमूद।'

× × ×

शहाबुद्दीन गोरी ने अपनी टिड्डी दल की तरह फौज को लेकर दिल्ली पर आक्रमण कर ही दिया। वह समझता था कि पृथवीराज इस आक्रमण की ओर से बिलकुल गाफिल ही है। किन्तु वह भ्रम में था। राजपूतों की बहुत बड़ी फौज को देखकर उसके हौसले ठंढे पड़ गये। उसे आश्चर्य था कि मेरे इस गुप्त आक्रमण की सूचना इन लोगों को मिल कैसे गयी ?

'हर हर महादेव' की जय के साथ राजपूत गोरी की फौज पर टूट पड़े। मुसलमानों की अधिकांश फौज तितर-बितर होकर भाग चली। शहाबुद्दीन को पृथिवीराज की फौज का कुछ अंदाज ही न मिलता था। यद्यपि राजपूतों

की फौज गोरी की फौज से संख्या में बहुत कम थी। किन्तु उसका संगठन और संचालन इतने सुचारु रूप से हुआ था कि मुसलमानों को भ्रम होगया कि दिल्ली में राजपूतों का असंख्य दल उन्हें पीस डालने के लिये मौजूद है। राजपूतों ने हजारों मुसलमानों को मूली गाजर की तरह काट डाला।

शहाबुद्दीन घबड़ा गया। वह भागने की तैयारी में था कि स्वयं पृथिवीराज ने उसे आ घेरा। शहाबुद्दीन को असहाय देखकर महाराज हंसे।

'किधर चले अमीर साहब ?' पृथिवीराज ने हंसकर ललकारा।

शहाबुद्दीन घबड़ा कर बोला 'मैं हार मान रहा हूं बादशाह। आप मुझे कैद कर सकते हैं।'

हंस कर महाराज बोले 'लेकिन हमारे और आपके दो-दो हाथ तो हो ही जाना चाहिए आपके हौसले न रह जाना चाहिए।'

शहाबुद्दीन ने पृथिवीराज के सामने हथियार डाल दिये।

गंभीर होकर महाराज ने कहा 'अब दिल्ली की ओर नजर उठाने का तो साहस न होगा आपका ?'

शहाबुद्दीन आजिजी के साथ बोला 'किसकी दम है जो दिल्ली की तरफ देख सकेगा।'

कुछ सोच कर महाराज ने कहा 'अच्छी बात है।' मगर सिपाहियों की तरफ देख कर 'अमीर को इज्जत के साथ दिल्ली की सीमा के बाहर पहुंचा दो।'

सिपाही अमीर को लेकर चले गये। उनके जाते ही पृथिवीराज के परम मित्र चंद कवि ने कहा 'यह अच्छा नहीं किया महाराज आपने। यवन का कोई विश्वास नहीं।' पृथिवीराज ने सीना तान कर कहा 'इसका कोई भय नहीं राजपूत को। वह करेगा तो फल पायेगा।'

चंद कवि का फिर कुछ कहने का साहस न हुआ।

× × ×

शहाबुद्दीन को हराकर पृथ्वीराज फिर अन्तःपुर की रंगरेलियों में मस्त हो गया। उसने सचमुच समझ लिया था कि शत्रु अब दिल्ली की ओर देख भी न सकेगा और वास्तव में जो क्षति शत्रु की हुयी थी उससे उसके हौसले सदा के लिए पस्त हो गये थे। शहाबुद्दीन महीनों बिस्तर पर पड़ा हुआ अपनी इस हार को भुलाने की चेष्टा करता रहा।

किन्तु महमूद कुछ और था। वह निरंतर सेना को मजबूत करता रहा। वह बड़ी दूर तक चक्कर काटता—इसलाम के नाम पर सेना एकत्र करता—और दिल्ली के आस पास गुप्तचरों का जाल बिछाने का प्रयत्न करता। उसे विश्वास था कि एक दिन वह आक्रमण करने योग्य

अवश्य हो जायगा। वह शहाबुद्दीन गोरी के पास पहुंच कर उसे ढाढ़स बंधाता अपनी सेना के संगठन की डींगें हांकता और उसको साहस प्रदान करता।

इधर अरेलू झगड़ों में हिन्दुस्तानी शक्ति को छिन्न-भिन्न कर रक्खा था। कनौज का शासक जयचंद पृथ्वीराज को फूटी आंख न देख सकता था। वह किसी प्रकार से भी उसे मिटा डालने के प्रयत्न में था। वह शहाबुद्दीन गोरी को भी पृथिवीराज के विरुद्ध मदद करने को तैयार था। हिन्दू-साम्राज्य अपनी अंतिम घड़ियां गिन रहा था।

महमूद को राई रत्ती बात का पता था। उसके गुप्तचर कन्नौज तक पहुंच गये थे। पृथिवीराज और जयचंद के मनोमालिन्य की बात जान कर वह हर्ष से खिल गया था। उसने शीघ्र ही गोरी को यह समाचार पहुंचाया।

हिन्दुस्तान की फूट जयचंद का भ्रातृ-विरोधी रुख और पृथिवीराज के अन्तःपुर की रंगरेलियों का समाचार सुन कर शहाबुद्दीन उठ खड़ा हुआ। महमूद की पीठ ठोंकते हुए बोला 'शाबास। अब मुझे अपनी कामयाबी का इत्मीनान हो गया। मुझे तो अपना ही बतन पसंद है अगर दिल्ली पर फतह दस्तयाब हुयी तो मैं तुम्हें दिल्ली का सुलतान बना दूंगा।'

महमूद दिल ही दिल प्रसन्न हुआ किन्तु वह जानता था कि दिल्ली को फतह कर लेना आसान काम नहीं है।

अंत में इस बार दूनी सेना के साथ शहाबुद्दीन गोरी ने दिल्ली पर आक्रमण किया। महमूद का कहना ही ठीक निकला। दिल्ली में किसी प्रकार की विशेष तैयारी न थी। जयचंद ने अपने वचन का पालन किया। वह बिल्कुल तटस्थ रहा।

थानेश्वर के पास तलावड़ी के मैदान में राजपूतों ने शहाबुद्दीन गोरी की फौज का सामना किया। घमासान युद्ध हुआ राजपूतों ने प्राण देकर अपनी लड़ने की शान को कायम रक्खा। किन्तु इस बार पार पाना कठिन था। पृथ्वीराज बड़ी वीरता से लड़ा किन्तु विजय श्री मुसलमानों के हाथ लगी। दिल्ली पर गोरी का अधिकार हो गया। हिन्दूराज का अंत हो गया।

पृथ्वीराज बंदी बना लिया गया।

[७]

दिल्ली के तख्त पर शान के साथ बैठा हुआ शहाबुद्दीन अपनी दाढ़ी पर हाथ फेर रहा था।

वजीर ने सलाह दी 'पृथ्वीराज को छोड़ देना चाहिये।'

शहाबुद्दीन दाढ़ी पर हाथ फेरता हुआ इसी बात पर

गौर कर रहा था। उसने सेनापति महमूद को बुलाने की आज्ञा दी।

महमूद ने आकर अभिवादन किया।

शहाबुद्दीन ने क्षण भर रुक कर कहा 'पृथवीराज को छोड़ ही देना होगा महमूद। इसी में हमारी शान है।'

महमूद ने झुक कर सलाम किया और बोला 'शहंशाहे हिन्दुस्तान पृथ्वीराज इस नाचीज का कैदी है। उसे मेरे हवाले किया जाय।'

इच्छा न रहते हुए भी गोरी बोला 'अच्छी बात है। कैदी को अभी सिपहसालार महमूद के हवाले किया जाय।'

[८]

किले के कैदखाने की एक साधारण सी कोठरी में हिन्दुओं का सूर्य बंद था। रात्रि के अंधेरे में कोठरी के फर्श पर लेटा हुआ हिन्दुओं का अंतिम सम्राट पृथ्वीराज अपनी अंतिम घड़ियों की प्रतीक्षा कर रहा था। उसे यवन से किसी प्रकार की आशा न थी।

संतरी सतर्क हुआ और तीन चार सिपाहियों के साथ एक औरत ने आकर कोठरी का दरवाजा खोला।

पृथ्वीराज ने पहिचाना। वह सेनापति महमूद की बीबी कुलसुम थी।

जलती हुयी आंखों से कुलसुम ने आवाज दी 'पशुपत'

पृथ्वीराज सब कुछ समझ गया था। हंसकर बोला 'पशुपत नहीं दिल्लीपत।'

रात्रि की नीरवता का ध्यान रखते हुए भी कुलसुम ने व्यंग्यात्मक ठहाका लगाया। पृथ्वीराज चुप रहा।

कुलसुम ने गंभीर होकर कहा 'एक औरत को अपने इश्क में बरबाद करके तूने जो मुसलमानों का सारा भेद पूछ लिया था उसका बदला आज चुकाने आयी है आज कुलसुम। तू दगाबाज है। तेरी चाल फेर और मुहब्बत की बातों में फंस कर मैंने हजारों मुसलमानों का खून बहवा दिया था उस साल। बोल तुझे क्या सजा दी जाय ?'

पृथ्वीराज का रक्त खौल उठा। वह तन कर बोला 'ऐ नाचीज गुलाम की औरत तू क्या यह समझ कर आयी है कि पृथ्वीराज तुझसे अपने प्राणों की भीख मांगेगा ?'

कुलसुम जल भुन गयी। उसने सिपाहियों को अंगीठी और लोहे की सलाखें लाने की आज्ञा देते हुए कहा 'इस बेईमान की आंखें फोड़ दो।'

महाराज अचल रहे।

अंगीठी और सलाखें लेकर सिपाही आये। सलाखों को गरम करके कुलसुम पृथ्वीराज की ओर बढ़ी।

पृथ्वीराज ने साहस के साथ अपनी आखें खोल दीं। कुलसुम ने निर्दयता के साथ महाराज की दोनों आंखों में सलाखें घुसेड़ दीं।

रक्त-धारायें और सब शान्त। महाराज के मुंह से आह भी न निकली। उनके मुंह से निकला 'नीच स्त्री के सहवास का ही ईश्वर की ओर से यह दंड मिला है मुझे। किन्तु यह सब राजनीति के लिए था प्रभो—मुझे क्षमा करना।'

कुलसुम दंग रह गयी। अपने कुकृत्यों पर धीरे धीरे लज्जा को हंसी हंसते हुए वह लौट गयी।

× × ×

शहाबुद्दीन गोरी ने महमूद के सिर पर ताज रखते हुए कहा 'मैं वतन को लौट रहा हूं महमूद। आज से तुम हिन्दुस्तान से शाहंशाह हुये। मुझे उम्मेद है कि तुम मुसलमानी हुकूमत को कायम और कामयाब रक्खोगे।'

महमूद ने सिर झुका कहा 'जहांपनाह का हुक्म सिर माथे पर।'

शहाबुद्दीन ने कहा 'आज से कुतुबुद्दीन ऐबक के नाम से तुम्हारी सलतनत शुरू होती है।'

और...

कल का गुलाम महमूद आज कुतुबुद्दीन ऐबक के नाम से हिन्दुस्तान का सम्राट हो गया।

और कुलसुम ?

वह अब थी दिल्ली की रानी।

★

आग़ामीर की ड्योढ़ी

[१]

बरसात में जब यह नाला वेग से बहकर अपनी गर्जना से आने-जाने वालों के कानों में अपने अस्तित्व की धाक जमाता रहता है उस समय कदाचित् ही किसी का ध्यान इस गर्जना में निहित उस इतिहास की ओर जाता हो जिसमें मानव-मस्तिष्क की योजनाओं की सफलता एवं विफलता अंतर्हित है। गर्मी के दिनों में यह नाला निर्जीव सा पड़ा रहता है किन्तु वर्षा के दिनों में जब यह नाला उमड़-घुमड़ कर पागल सा हो जाता है तो नगर में प्रलय का दृश्य उपस्थित कर देता है।

मूसलाधार पानी पड़ चुका था। ऊपर बादल गरज रहे थे और नाले की गर्जना आने-जाने वालों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रही थी।

मैं पूछ बैठा 'इतना शोर किसलिये ?'

गर्जना के शब्दों में नाले ने कहा 'तुम क्यों रुक गये ? अपना रास्ता पकड़ो। मुझसे तुम्हारा वास्ता ?'

मैं बोल उठा 'तुम्हारी गर्जना में जो एक चीत्कार है उसमें एक दर्द सा छिपा हुआ मालूम दिया मुझको।'

मेरी खिल्ली सी उड़ाते हुये नाले ने कहा 'ओह मानव-स्वभाव में यह अभूतपूर्व परिवर्तन। तुमने ऐसा हृदय कहां से पाया पथिक ?'

मैं गंभीर होकर बोला 'मानव ही सृष्टा है। प्रकृति से उसकी होड़ चला करती है।'

हंसकर नाला बोला 'मानव और प्रकृति से होड़ ? यह भी खूब रही।'

मैं स्फुट स्वर में बोला 'अरे मूर्ख प्रकृति के निर्माण अधूरे और कहीं-कहीं निरर्थक भी हैं। इसके विपरीत मानव ने सदा पूर्णत्व और सार्थकता को जन्म दिया है। तेरा निज का अस्तित्व भी तो उसी प्रकृति की निर्माण-बुद्धि का एक उपहास मात्र ही तो है ?'

हंसकर नाले ने कहा 'मानव-शक्ति की सार्थकता की दुहाई देने वाले अनजान पथिक तू भ्रम में है। मेरा

अस्तित्व मानव-मस्तिष्क की योजनाओं का एक अधूरा प्रयास ही है। प्रकृति से मेरा कोई सम्बन्ध नहीं।'

आश्चर्य की मुद्रा में मैं पूछ बैठा 'यह कैसे ?'

बीच ही में नाला बोल उठा 'स्वयं मेरा इतिहास ही इसका साक्षी है। इतिहास बतलाता है कि.....'

× × ×

लखनऊ के नवाब गाजीउद्दीन हैदर को इमारतें बनवाने का बड़ा शौक था। वह लखनऊ को सुन्दर से सुन्दर इमारतों से सजा देना चाहता था। कहते हैं कि उसने इस कार्य में बुरी तरह रुपया व्यय किया।

मौतमुद्दौला आगामीर एक साधारण से कर्मचारी थे। अपनी कुशाग्र बुद्धि के कारण वे धीरे धीरे उच्च पद पर आसीन हो गये। नवाब गाजीउद्दीन हैदर ने आगामीर के मूल्य को समझा और इस प्रकार वे नवाब साहब के दाहिने हाथ बन गये।

आगामीर की योजनायें नवाब साहब को पसंद आयीं। वे उनसे इतने सख्त प्रभावित हो गये कि उन्हें अपना मित्र मान लिया। उनका अधिकांश समय उन्हीं की संगति में व्यतीत होने लगा। लखनऊ की जमीन को अधिक उपजाऊ बनाने की ओर आगामीर का ध्यान गया। उन्होंने गंगा के पानी को लखनऊ में लाने की योजना बना डाली। नवाब साहब इस योजना से बड़े

प्रभावित हुए। वे जानते थे कि इस योजना के कार्यान्वित होते ही लखनऊ भारत का स्वर्ग बन जायगा।

किन्तु न जाने क्यों नवाब साहब की प्रधान बेगम—जिन्हें बादशाह बेगम कहकर पुकारा जाता था—को आगामीर प्रभावित न कर सके। धीरे धीरे उनके हृदय में आगामीर के प्रति ईर्षा और घृणा की भावना भरती चली गयी। वे आगामीर के विनाश की योजना बनाने लगीं।

इधर नवाब साहब का बादशाह बेगम के महल में आना-जाना कम हो गया था। बादशाह बेगम ने इसका भी कारण आगामीर को ही समझा।

[२]

बादशाह बेगम ने कुछ उदास भाव से कहा 'तब यों कहो कि आजकल हुजूर किसी और रंग में हैं।'

बांदी ने कुटिलता की मुसकान के साथ कहा 'मालिकेजहां को तो अब इन नई बेगम साहिबा से फ़ुरसत नहीं मिलती।'

भवों पर बल डालते हुए बेगम साहिबा ने कहा 'नई बेगम? क्या फिर हुजूर को नई बेगम रखने का शौक पैदा हुआ है?'

मुसकुराते हुये बांदी ने कहा 'गुस्ताखी मुआफ हो सरकार। ये नई बेगम साहिबा औरत नहीं मर्द हैं हुजूर।'

आश्चर्य के साथ बादशाह बेगम ने कहा 'यानी ?'

'यानी आजकल मौतमुद्दौला आगामीर ही मालिके अवध की बेगम हो रहे हैं' बांदी ने कहा।

बादशाह बेगम ने पूछा 'इसका मतलब ?'

हलकी सी मुसकान के साथ बांदी ने कहा 'आजकल लखनऊ को जन्नत बनाने का बीड़ा जो आगामीर ने उठा रक्खा है। हजरत आजकल इन्हीं आगामीर के ही पेचोताब में रहते हैं।'

बेगम साहिबा चुप हो गयीं।

बांदी ने दूसरी चोट की 'सुना है हजरत आगामीर को सलतनते अवध का वजीरे आजम बनाने जा रहे हैं।'

बादशाह बेगम का चेहरा कुछ क्रोध से तमतमा सा उठा था। भवों पर बल डालती हुयी बोलीं 'हजरत के सिर से यह भूत उतारना ही पड़ेगा। एक अदना सा आदमी हमारे सिर पर चढ़कर हजरत को गुमराह नहीं कर सकता। अभी आगामीर का बादशाह बेगम से मुकाबिला नहीं पड़ा। अच्छी बात है देख लिया जायगा।'

× × ×

और उधर...

नवाब साहब ने मौतमुद्दौला आगामीर के कंधे पर हाथ रखते हुये कहा 'यह सब कैसे हो सकेगा मेरे दोस्त ?'

आगामीर ने निहायत अदब के साथ 'यह सब खुदा के फ़ज़ल और आपकी मेहरबानी से होगा। हिन्दुओं की मजहबी किताबों में पता चलता है कि सुरग से गंगा को जमीन पर लाने की कोशिश की गयी थी। हम तो सिर्फ कानपुर से ही गंगा को लखनऊ में लाने की बात सोच रहे हैं।'

नवाब साहब आगामीर की बुद्धि का लोहा मानते थे। उनकी पीठ ठोंकते हुए बोले 'शाबास आगामीर! तुम्हारी हिम्मत को आफरीं है। मुझे यकीन हो गया कि तुम जरूर कामयाब होंगे।'

आगामीर चुप रहे। नवाब साहब खुश होकर बोले 'वाह, क्या कहना है! जिस वक्त उमड़-घुमड़ कर गंगा का पानी लखनऊ की जमीन पर बहने लगेगा उस वक्त अवध का यह खजाना किसी कदर जन्नत से कम न रह जायगा। इस काम के लिये जितना भी रुपया खर्च किया जाय थोड़ा है।'

आगामीर ने कहा, 'रुपये से ज्यादा इसमें वक्त और दिमाग खर्च होगा हुजूर।'

कुछ आवेश में आकर नवाब साहब बोले 'जितना भी रुपया खर्च होगा खर्च किया जायगा आगामीर। गंगा के पानी को लखनऊ में लाना ही पड़ेगा।'

[३]

आज बहुत दिन बाद नवाब साहब से अपना अभीष्ट साधन कर लेना चाहती थीं।

अवसर देखकर बेगम साहिबा ने कहा 'गंगा की नहर का काम लगा कर जो आगामीर ने मालिके अबध की शान बढ़ायी है वह काबिले गौर और तारीफ है। आगामीर की जितनी इज्जत की जाय सब थोड़ी है।'

प्रसन्न होकर नवाब साहब ने कहा 'आगामीर सलतनत के सिर्फ नौकर ही नहीं बल्कि मेरे दोस्त हैं। मैं उन्हें सबसे बड़ी इज्जत बख्शना चाहता हूं।'

बेगम साहिबा ने कहा 'सुना है आगामीर बड़े ईमानदार आदमी हैं। एक मामूली आदमी का इतना बड़ा ईमानदार होना ताअज्जुब की बात है।'

नवाब साहब को बेगम की यह बात कुछ अधिक अच्छी न लगी। वे धीरे से बोले 'आगामीर मामूली आदमी नहीं हैं। तुम्हें शायद मालूम नहीं कि आगामीर इस सलतनत के वजीरे आजम होने जा रहे हैं। मुझे उनकी दोस्ती का फख्र है।'

बादशाह बेगम को यह बात भली न लगी किन्तु अपनी भावनाओं को दबा कर बोली 'मालिके जहां दुरुस्त ही कह रहे हैं। आगामीर हरेक इज्जत के लायक हैं।'

× × ×

किन्तु बादशाह बेगम ने आगामीर के विनाश का षड्यंत्र तैयार कर लिया था। एक दिन आधी रात को उन्होंने चुपचाप आगामीर को अपने महल में बुला भेजा।

आगामीर इस निमंत्रण को पाकर घबड़ाये भी और उन्हें आश्चर्य भी हुआ। किन्तु बेगम साहिबा का हुक्म टालना उनके वश की बात न थी।

आगामीर को सामने देखकर बेगम साहिबा ने उन्हें बड़ी इज्जत के साथ बिठलाया। वे बोलीं 'तमाम लखनऊ में तुम्हारी इज्जत को बढ़ते देखकर एक बार तुमको देखने की ख्वाहिश हुई मेरी आगामीर। मैं तुम्हारी इज्जत करती हूं।'

अभिवादन करते हुये आगामीर ने कहा 'मुझ नाचीज को जो इज्जत आपने बख्शी है वह मेरे लिये बायसे फख्र है। मेरे लिये हुक्म कीजिये।'

एक सुन्दर सा डिब्बा आगामीर की ओर बढ़ाते हुये बादशाह बेगम ने कहा 'अवध की सल्तनत की खिदमतों का यह सिला है तुम्हारे लिये अख्तियार। मैं तुम्हारे लिये लखनऊ में एक आलीशान कोठी बनवाना चाहती हूं। इस जवाहरातों को बेच कर तुम अपने लिये एक शानदार कोठी बनवा लो।'

आगामीर कुछ असमंजस में पड़ गये। उन्हें आगा पीछा करते देख बेगम साहिबा बोल उठीं 'यह मेरा हुक्म

है आगामीर। गंगा की नहर बनने से पहिले तुम्हारी कोठी बन कर खड़ी हो जाय यही मेरा हुक्म है। उम्मीद है कि तुम्हें मेरा हुक्म मानने में किसी तरह का इंकार न होगा।'

सिर झुका कर आगामीर ने कहा 'मलिका के हुक्म से कौन इंकार करने की ताकत रखता है। आपका हुक्म आगामीर के सिर माथे पर है।'

प्रसन्न होकर बेगम साहिबा ने कहा 'मैं तुमसे बहुत खुश हूं आगामीर। मैंने तुम्हें इतनी रात को छिप कर इसलिये बुलाया कि मैं इस बात को ज़ाया नहीं करना चाहती। इसमें तुम्हारी इज्जत का ख्याल रक्खा गया है।'

आगामीर ने हाथ बढ़ाकर जवाहिरातों का डिब्बा ले लिया।

बेगम साहिबा ने बांदी को बुलाकर कहा 'आगामीर को बाइज्जत महल के बाहर पहुंचा दो। खबरदार यह बात किसी को मालूम न हो।'

आगामीर को महल के बाहर पहुंचा दिया गया।

उनके बाहर जाते ही बेगम साहिबा धीरे से मुसकुरा दीं।

[५]

गंगा की नहर की खुदाई का काम प्रारंभ हो गया। आगामीर की योजना कार्यान्वित होने लगी। हजारों

रुपये पानी की भांति बहने लगे। नवाबसाहब ने प्रसन्न होकर आगामीर को अवध का प्रधान मंत्री बना दिया।

इधर शान के साथ आगामीर की भी कोठी बनने लगी। बेगम साहिबा के दिये हुये जवाहरात लाखों रुपये के थे। आगामीर ने थोड़े से जवाहरात बेच दिये तथा अपने लिये आलीशान कोठी बनवाने लगे।

आगामीर के शत्रुओं के हृदय पर सांप लोटने लगे। वे घूम-घूम कर उनके विरुद्ध जहर उगलने लगे। उन्होंने घूम घूम कर इस बात का प्रचार करना प्रारंभ किया कि नहर की खुदाई के लिये स्वीकृत धन से ही आगामीर की कोठी बन रही है। धीरे धीरे सारे राज्य में यह बात फैला दी गयी। नवाब साहब के कानों तक भी यह बात पहुंच गयी किन्तु वे चुप रहे।

अवसर पाकर एक दिन बादशाह बेगम ने नवाब साहब से कहा 'सुना है आगामीर की कोठी बड़ी शानदार बन रही है। यह भी सुना है कि ड्योढ़ी पर जवाहरात जड़े जायंगे।'

नवाब साहब हूं' कह कर चुप हो गये।

थोड़ी देर चुप रह कर बेगम साहिबा ने कहा 'आगामीर सलतनते अवध के वजीरे आज़म हैं। उनके लिये तो लखनऊ में एक शानदार कोठी होना ही चाहिए।'

नवाब साहब चुप रहे।

बेगम साहिबा कहती गयीं 'लोग तो किसी की तरक्की बरदाश्त नहीं कर सकते। आगामीर के खिलाफ बेबुनियाद बातें करते फिरते हैं। ऐसे लोगों को सजा मिलना चाहिये।'

नवाब साहब इस विषय पर बात न करना चाहते थे। धीरे से बोले 'आगामीर फर्रुखाबाद गये हुये हैं। उनके लौटने पर ही कोई कार्रवाई हो सकती है।'

बेगम साहिबा चुप हो गयीं।

× × ×

बादशाह बेगम के महल से जवाहरातों की चोरी का समाचार लखनऊ में बिजली की तरह फैल गया। चिराग के नीचे अंधेरा कैसा ?

चारों ओर तलाशियों की धूम मच गयी। अंत में एक जौहरी के यहां कुछ जवाहरात पकड़ लिए गये।

जौहरी नवाब साहब के सामने पेश किया गया। नवाब साहब ने स्फुट स्वर में पूछा 'ये जवाहरात आपको कहां से मिले ?'

जौहरी सिर नीचा किये खड़ा रहा। नवाब साहब ने कड़क कर कहा 'मेरे हुक्म की फौरन तामील की जाय। आपको ये जवाहरात कहां मिले ?'

जौहरी ने भयभीत होकर कहा 'खता मुआफ हो।

मैंने ये जवाहरात बजोरे आजम से खरीदे हैं। मेरे साथ इन्साफ किया जाय।'

आश्चर्य से आंख फाड़ते हुए नवाब साहब ने कहा 'क्या कहा ? क्या आगामीर से ?'

'जी हां' कांपते हुए जौहरी ने कहा।

'हूं' कह कर नवाब साहब चुप हो गये।

जौहरी को हवालात में बंद कर दिया गया। आगामीर के मकान की तलाशी का फरमान जारी कर दिया गया।

[५]

फरुखाबाद से लौटते ही आगामीर को कैद कर लिया गया।

नवाब साहब के सामने वे पेश किए गये। आगामीर सिर झुकाये खड़े हुए थे।

नवाब साहब ने भरे हुए कंठ से कहा 'मुझे तुमसे ये उम्मीद न थी कभी आगामीर। तुमने मेरी सारी उम्मीदों पर पानी फेर दिया।'

आगामीर ने नीचा सिर किये हुए कहा 'लेकिन मैं बेगुनाह हूं मालिके जहां। मेरे खिलाफ साजिश की गयी है।'

नवाब साहब के नेत्र अश्रुपूर्ण थे। वे बोले 'मैं सब कुछ समझता हूं। लेकिन मैं मजबूर हूं आगामीर। मुज-

रिम को सजा न देना सलतनते अवध की शान के खिलाफ होगा।'

आगामीर नवाब साहब के मनोभावों को समझते थे। बोले 'मुझे सजा दी जाय मालिके अवध। मैं उसके लिये तैयार हूं।'

नवाब साहब ने आगामीर को लखनऊ छोड़कर चले जाने का दंड दिया। उन्हें कानपुर भेज दिया गया। चलते समय नवाब साहब ने आगामीर को इतना धन दे दिया था जिससे वे आराम के साथ जीवन भर रह सकें।

आगामीर की मृत्यु कानपुर में ही हुयी। उनके वंशज आज भी मौजूद हैं।

नहर की खुदाई का काम अधूरा ही पड़ा रह गया। अभागी नहर आज भी लखनऊ के हृदय को चीर कर पड़ी हुयी आगामीर की स्मृति में चार आंसू बहाती रहती है। आगामीर की वह कोठी भी आज तक अकड़ी खड़ी हुयी है—उसे लोग आगामीर की ड्योढ़ी कह कर पुकारते हैं।

× × ×

वर्षा रुक गयी थी। मुझे चौंक जाना था। लेने सवारी के लिये चारों ओर दृष्टि दौड़ाई।

दूर पर हक्के वाला आवाज़ लगा रहा था 'एक सवारी—आगामीर की ड्योढ़ी.....'

★

धर्म की खोज

[१]

'इसलाम जिन्दाबाद'

सहस्त्रों कंठों से एक साथ ध्वनि निकली। मानव गद्गद् हो उठा।

वह आज धर्म की खोज में निकला था। वह अपने लिए एक ऐसा धर्म चुनना चाहता था जिसमें रहकर सम्मानपूर्वक जीवन बिता सके। वह ऐसे धर्म की खोज में था जिसमें उसका बौद्धिक विकास हो सके तथा शान्ति और सुख मिल सके।

वह इसलाम से प्रभावित हो गया।

इसलाम धर्म के अनुयायियों की एक सभा हो रही तथा एक वृद्ध मौलाना भाषण दे रहे थे 'भाइयों लाम मिल्लत का सबक सिखलाता है। अगर इसलाम सूलों पर चलना है तो इंसानियत के फर्ज को अदा ना तुम्हारा पहिला काम हो जाता है। अपने पड़ोसियों अपना साया रक्खो—बेगुनाह पर हाथ छोड़ना बिली है। ईमानदारी के साथ जिन्दगी बसर करना, ाई पर कायम रहना, इंसान को इंसान समझना और रत को प्यार में बदलते रहना हरेक मुसलमान का र्त है। इसलाम नशाखोरी को हराम समझता है। लाम जिन्दाबाद।'

मानव को इच्छित धर्म मिल रहा था। वह ऐसे ही र्म की खोज में था जो सुख और शान्ति के साथ ही साथ सके जीवन का स्तर ऊंचा कर सके। वह प्रसन्नता के थ पग बढ़ाता हुआ कलमा पड़ने के लिए किसी मुल्ला ी खोज में मसजिद की ओर चल दिया।

× × ×

मसजिद में काफी भीड़भाड़ थी। एक ओर हथियारों ौर लाठियों का ढेर लगा हुआ था। एक मौलाना पनी जोशीली वक्तृता में फरमा रहे थे 'भाइयों अगर सलाम को जिन्दा रखना है तो खून की नदियां बहा ो। तुम्हारे मुहल्ले से जो भी हिन्दू निकले उसके छुरा

घुसेड़ दो। हिन्दुओं के मुहल्लों को लूट लो, उनके घरों में आग लगा दो तथाउनकी औरतों की अस्मत लूट लो। बहादुरों! औरत, मर्द, बच्चा-बूढ़ा कोई भी तुम्हारे से जिन्दा बच कर न जाय। इसी में तुम्हारी और इसलाम की बहबूदी है। इसलाम जिन्दाबाद।'

मानव चकित रह गया। यह कैसा इसलाम? औरतों और बच्चों का बध! बेगुनाहों की हत्या!! उफ वह क्या करने जा रहा था? इस धर्म में रह कर कौन सम्मानित जीवन व्यतीत कर सकेगा?

उसने अपना इरादा बदल दिया। उसके कदम पीछे हट गये। वह कुछ सोच कर किसी और धर्म की खोज में दूसरी ओर चल दिया।

रास्ते में एक शराबखाने के सामने नाली के पास दो इसलाम के बंदे औंधे मुंह पड़े हुए थे।

मानव ने घृणा से मुंह फेर लिया। उसे अब दूसरे धर्म की खोज थी।

[२]

मंदिर के विस्तृत प्रांगण में प्रवचन हो रहा था। मानव कोने में चुपचाप खड़ा होकर सुनने लगा। महामहोपाध्याय महोदय अपनी सुन्दर सी वाणी द्वारा श्रोताओं पर अमृत की सी वर्षा करते हुए कह रहे थे.....

'हिन्दू धर्म महान है। नास्तिक तक को क्षमा कर

देने का विधान हमारे धर्म में है। इस धर्म में रह कर मनुष्य अपना बौद्धिक विकास कर सकता है। सुख और शान्ति जितनी इस धर्म में मिलेगी उतनी किसी धर्म में नहीं। प्रत्येक जीव पर दया करना तथा प्रत्येक धर्म के अनुयायी के साथ सज्जनता और सहिष्णुता का व्यवहार करना, हिन्दू मात्र का कर्त्तव्य है। किसी पर अत्याचार करना, स्त्रियों का अपमान करना तथा प्रत्येक से समानता का व्यवहार न रखना हिन्दू धर्म में वर्जित है। आत्मिक उन्नति के बल पर ऊंचे स्तर की भावनाओं का प्रचार व प्रसार प्रत्येक हिन्दू का कर्तव्य है।'

मानव फिर प्रफुल्लित हो उठा। हिन्दू धर्म वास्तव में महान है। इस धर्म में रह कर वह अवश्य सुख और शान्ति के वातावरण में सो सकेगा।

उसने निश्चय कर लिया कि वह अवश्य इसी धर्म की दीक्षा लेगा।

× × ×

शुभ्र-सलिला जान्ह्वी के तट पर संध्या के क्षीण अंधकार में सिर पटक पटक कर रोती हुयी किसी स्त्री की स्पष्ट छाया मानव देख सका।

उसने निकट पहुंच कर मधुर वाणी में कहा 'बहिन तुम्हें कुछ कष्ट है क्या ?'

स्त्री ने सिर पटकना बंद किया तथा कड़क कर

कर्कश शब्दों में हाथ उठाते हुये कहा 'दूर हो। यदि तुम हिन्दू हो तो फौरन मेरी आंखों से दूर हो।'

मानव विस्मय-विस्फारित नेत्रों से बोला 'यह तुम क्या कह रही हो सभ्ये! हिन्दू धर्म तो महान है।'

स्त्री आवेश में उठ कर खड़ी हो गयी तथा स्फुट-स्वर में बोली 'धिक्कार है तेरे इस महान हिन्दू धर्म पर। आज उसी धर्म के समाज द्वारा तिरस्कृत, प्रपीड़ित और बहिष्कृत होकर मैं तेरे इस महान धर्म पर थूंक रही हूं। जितनी जल्दी यह धर्म रसातल को चला जाय उतनी ही जल्दी विश्व का कल्याण हो सकेगा। आज इसी धर्म के अत्याचार स्वरूप करोड़ों ने अपना धर्म परिवर्तन कर लिया है तथा करोड़ों इसके नाम पर रुधिर के आंसू बहा रहे हैं। शालीनता, सहिष्णुता और मनुष्यता तो इस धर्म में छू तक नहीं गयी है। इस धर्म में कौन से अत्याचार नहीं होते? अपने ही धर्म के अनुयायियों को कुत्तों से अधिक घृणित तथा अस्पर्श समझने की अनुदारता इस धर्म का विशेष गुण है। धर्म के नाम पर ढोंग, व्यभिचार और अनाचार इसी धर्म में तुम्हें मिलेगा। जिस धर्म में नारी को पैरों की जूती के समान समझा जाता है, जिस धर्म का समाज मेरे बुड्ढे पति को मेरे साथ चौथा विवाह करने की सहर्ष आज्ञा दे सकता है वही समाज मुझ जैसी युवती को पति की मृत्यु के पश्चात् भी दूसरे विवाह की आज्ञा नहीं दे सकता। कैसा है यह

धर्म ? कैसा है इसका समाज ? आज इसी धर्म की अनुदारता के कारण मुझे अपने जीवन का अंत करने के लिये विवश होना पड़ रहा है ।'

कहती कहती उक्त स्त्री विक्षिप्तो की भांति नदी की ओर दौड़ी । मानव 'हां-हां' करता ही रहा किन्तु एक 'छपाक' ने उस स्थान की नीरवता को कुछ और अधिक बढ़ा दिया ।

अब हिन्दू धर्म की ओर से उसकी रुचि के पैर उखड़ रहे थे । वह पग बढ़ाता हुआ किसी अन्य धर्म की खोज में चल दिया ।

[३]

गिरजा-घर में प्रार्थना के घंटे बज उठे थे । सुवेषित नर-नारियों का समूह प्रभु ईसा मसीह के चरणों में अपनी वंदना के फूल चढ़ाने के लिए एकत्र हो रहा था ।

पादरी ने प्रभु के वाक्यों को दुहराया 'जो तुम्हें मारे तुम उसे प्यार करो । यदि तुम्हारे गाल पर कोई एक थप्पड़ मारे तो तुम्हारे हृदय में बदले की भावना उत्पन्न न होना चाहिये वरन् अपना दूसरा गाल दूसरे थप्पड़ के लिए प्रस्तुत कर देना चाहिए । जो तुम्हें मारे तुम उसे प्यार करो ।'

'सुई की नोक के अंदर ऊंट का प्रवेश कर जाना सरल है किन्तु धनवान का ईश्वर के राज्य में प्रवेश पाना संभव नहीं ।'

मानव फिर गद्गद् हो गया था। नर-नारियों में समानता के भाव, पारस्परिक प्रेम और प्यार की दीक्षा और धर्म-संबंधी सिद्धांत देख और सुन कर मानव प्रसन्न हो उठा था। उसने निश्चय कर लिया कि वह प्रभु ईसा की शरण में जायगा। ईसाई-धर्म-ग्रहण करेगा।

× × ×

मेज पर समाचार-पत्रों का ढेर लगा हुआ था। मानव ने समाचार-पत्र पढ़ने के लिए उठाया। किन्तु यह क्या ? जर्मनी ने पोलैंड में यह कैसा हत्याकांड मचा दिया है ? अरे ये सब क्या ईसाई नहीं हैं ? अपने ही धर्म के अनुयायियों के साथ ऐसी बर्बरता ? क्या यही प्रेम और प्यार है ? कहां गया वह प्रभु ईसा मसीह का दूसरे गाल और थप्पड़ वाला सिद्धांत ? राज्य-सत्ता, वैभव और धन की किन ठोकरों ने प्रभु के 'ऊंट और सुई के धागे वाले 'वाक्य की धज्जियां उड़ा दी थीं ? छि: क्या आज यूरोप में एक ईसाई नहीं रह गया ?'

वह घबड़ा कर उठ खड़ा हुआ। वह धर्म की खोज में निकला था किन्तु उसके प्राण अब शान्ति चाहते थे। वह विक्षिप्तों की भांति भाग कर सड़क पर आ गया। वह नगर से गांव की ओर भाग रहा था। वह अब बिना किसी उद्देश्य के इधर-उधर भटक रहा था। उसके मांस्तष्क की दशा विचित्र थी। उसके ओंठ सूख रहे थे।

वह स्वयं ही न समझ पा रहा था कि वह क्या करे ? प्रत्येक दिशा में उसे धर्म के नाम पर धोखा, ठगी, बनावटीपन, ढोंग, असत्य, स्वार्थ और पतन के दर्शन हो रहे थे। उसके नैतिक और बौद्धिक विकास पर ताला सा पड़ता जा रहा था। भौतिकवाद की शृंखलायें उसके पैरों को जकड़ने के लिये झनझना रहीं थीं। धर्म की खोज ने उसकी शान्ति हर ली थी।

मानव बस्ती के बाहर भागा।

वह एक ऐसी कुटी के बाहर जाकर रुका जहां साधारण से आसन पर एक तेजस्वी महात्मा चश्मा लगाये चर्खे पर सूत के धागे खींच रहे थे। सामने थोड़े से खजूर, कुछ मूंगफली के दाने तथा समीप ही गिलास में भरा हुआ दूध रक्खा हुआ था।

मानव ने विक्षिप्तों की भांति स्फुट-स्वर में कहा 'मैं धर्म चाहता हूं महात्मा...शान्ति...क्या तुम मुझे दे सकोगे ?'

महात्मा ने अपना चश्मा-मंडित मुंह ऊपर करते हुये कहा 'तुम धर्म चाहते हो मानव ? तो सुनो इस युग में सर्व धर्मों का परित्याग ही सबसे महान धर्म है। धर्म तो सभी अच्छे हैं। सभी में मानव-कल्याण का सदुपदेश है। किन्तु ढोंग और धर्मान्धता ने उनमें मानवता का लोप कर दिया है। उसी मानवता के स्तर को आज फिर ऊंचा

करने का प्रयास करना है। यदि सुख और शांति चाहते हो तो मानव-धर्म ग्रहण करो।'

मानव आंख फाड़ कर महात्मा की ओर देखता रह गया।

× × ×

और—

थोड़े दिन बाद मानव ने पढ़ा कि उसी मानव-धर्म के प्रवर्तक महात्मा को किसी धर्म-रक्षक ने प्रार्थना के मंच पर तीन गोलियों से उड़ा कर अपने कथित धर्म की रक्षा कर ली थी।

★

वह क्या था ?

[१]

मेरे बाहर जाने की बात सुनकर सारा घर हंस पड़ा। राधा बोल उठी 'जीजाजी और बाहर जायं ? यह तो मजे की बात रही।'

कपूर साहब मुसकुराते हुए बोले 'हां-हां। सचमुच तुम्हारे जीजा जी बाहर जा रहे हैं राधे। इसमें आश्चर्य करने और हंसने की क्या बात है ?'

शांति मुंह मटका कर बोली 'गये हैं बाहर। देख लीजियेगा दो ही दिन में भाग खड़े होंगे। उन्हें डर जो बड़ा लगता है.....'

मैं कुछ खिसियाना सा होकर बोला 'डर तुझको लगता होगा। मैं क्या कभी बाहर गया नहीं हूं ?'

राधा मेरे मुंह अधिक लगी हुयी थी। सिर हिलाती हुयी बोली 'आप डरपोक तो बड़े हैं जीजाजी। रात में चूहे की आहट से चौंक पड़ते हैं। अगर बहिनजी पास में न हों तो आप तो अपने कमरे से भी भाग खड़े हों।'

आंखें तरेर कर श्रीमतीजी ने राधा की ओर देखते हुए कहा 'तू बड़ी बड़बोला हो गयी है राधे। चुप रह।'

राधा झट बोल उठी 'अच्छी बात है। तुम्हीं देख लेना बहिन अगर दो ही दिन में जीजाजी घर भाग कर न आ जायं तो मेरा नाम नहीं।'

कपूर साहब मुसकुराते हुए बोले 'ऐसी भी क्या बात है ? मदन बाबू मेरे साथ जा रहे हैं और १५ दिन बाद मेरे ही साथ लौटेंगे।'

राधा बोल उठी 'आप वहीं रह जायंगे लेकिन जीजाजी तो दो ही दिन में भाग.....'

उसे डांटते हुए श्रीमतीजी ने कहा 'चुप चुड़ैल.....'

× × ×

और.....

वास्तव में अधिक समय तक बाहर रहना मेरे स्वभाव में नहीं है। किन्तु इस बार मैंने निश्चय कर लिया था कि कम से कम १५ दिन तक तो अवश्य ही बाहर रहूंगा।

कपूर साहब दूर के रिश्ते में मेरी श्रीमती जी के चाचा लगते थे। वे मेरी ससुराल में दूकान का प्रबंध करने के लिये नौकर थे। व्यवसाय के संबंध में उनके साथ ही व्यापार की शिक्षा प्राप्त करने की नीयत से उनके साथ ही जाने की ठान ली थी।

मेरा असबाब बंध कर तैयार हो गया। श्रीमतीजी ने बहुत सा खाने का सामान पोटली में बांध दिया था जिससे मुझे बाहर कष्ट न हो।

हंसकर राधा ने कहा 'इतना सामान क्यों बांध दिया जीजी। अरे जीजाजी तो दो ही दिन में.....

उसे झिड़कते हुए मुसकुरा कर श्रीमतीजी ने कहा 'तू बड़ी शैतान है।'

राधा ने कहा 'अच्छी बात है देख लेना।'

[२]

कपूर साहब के साथ मैं आरा पहुंचा। गाड़ी शाम को साढ़े पांच बजे पहुंचती थी। जाड़े के दिन थे। मैंने कहा 'किसी अच्छे होटल में ठहरना चाहिये।'

कपूर साहब बोले 'आरा में कदाचित् ही कोई अच्छा होटल मिले।'

मैं बोला 'अच्छा-बुरा जैसा मिले आखिर ठहरना तो है ही।'

कुछ सोच कर वे बोले 'मेरे बहुत दूर के एक सम्बन्धी

यहां हकीमी करते हैं। उनकी बहुत बड़ी दूकान चौक में है। मैं तो उन्हीं के यहां ठहरता हूं। चलिये वहीं ठहरें।'

मुझे किसी भी अपरिचित के यहां ठहरना अच्छा नहीं लगता। किन्तु और कोई उपाय न देख कर मैं सहमत हो गया।

हम दोनों हकीम जी की दूकान पहुंचे। वास्तव में हकीम जी की दूकान बहुत बड़ी थी। मरीजों और ग्राहकों की भीड़ लगी हुयी थी।

हकीम जी ने बड़े प्रेम से हम लोगों का स्वागत किया।

भोजनादि से निवृत्त होकर जब हम लोग कमरे में आकर बैठे तो कपूर साहब ने कहा 'हकीम जी बड़े हंस-मुख आदमी हैं।'

मैंने पूछा 'हकीमजी का परिवार तो कुछ बड़ा नहीं मालूम पड़ता। इतने बड़े घर में ये लोग रहते कैसे होंगे?'

हंस कर कपूर साहब ने कहा 'हकीम जी का पारिवारिक इतिहास कुछ विचित्र सा है। स्त्री के मरने के बाद उन्होंने अपना दूसरा विवाह आर्य-समाज द्वारा किया। पहिली स्त्री से चार संतानें थीं किन्तु धीरे धीरे सभी मर गयीं। अब सिर्फ हकीमजी और उनकी ये दूसरी स्त्री ही इस घर में शेष रह गये हैं।'

कुतूहल के साथ मैंने कहा 'बच्चे कैसे मर गये?'

कपूर साहब बोले 'वैसे हकीमजी तो बड़े भले आदमी हैं किन्तु सुना है कि उनकी स्त्री का व्यवहार बच्चों के प्रति अच्छा न था।'

मैं चुप हो गया। थोड़ी ही देर में हकीम साहब ने आकर कहा 'सोने का प्रबन्ध हो गया है। आप लोग आराम करें। मदन बाबू के लिये ऊपर कमरे में प्रबंध कर दिया है और आप तो हम लोगों के पास ही सोयेंगे। हम लोग थोड़ी देर तक आप से गप्प लड़ायेंगे। यह तुम्हारी भाभी जी का ही हुकुम है।'

कह कर वे हंसने लगे।

कपूर साहब बोले 'ठीक है।'

मैं सचमुच अकेला सोने का आदी नहीं हूं किन्तु संकोच के कारण कुछ कह न सका।

हकीम जी मेरी ओर देख कर बोले 'आइये आपको कमरे में पहुंचा दूं। चल कर आराम करिये।'

मैं उठ खड़ा हुआ। हकीमजी मुझे ऊपर ले गये। वहां एक कमरे में मेरे लिये बिस्तर लगा हुआ था। वे बोले 'लीजिये आराम कीजिये। और किसी चीज की आवश्यकता तो नहीं है आपको ?'

मैंने नम्रता के साथ हाथ जोड़ते हुये कहा 'आपके होते हुये किस चीज की कमी हो सकती है। अब आपभी जाकर आराम करें।'

वे चले गये। मैंने कोट उतार कर खूंटी पर टांग दिया और गले तक लिहाफ ओढ़कर चारपाई पर आराम से लेट गया।

कमरा यों तो साफ सुथरा और पक्का था किन्तु ऐसा प्रतीत होता था कि घर वाले उसे कभी व्यवहार में नहीं लाते। सिरहाने की ओर एक शीशे की आलमारी थी जिसमें नानाप्रकार की जड़ी बूटियां बेतरतीब से भरी पड़ी थीं। उसी के पास एक तिपाई पर लालटेन रक्खी जल रही थी। कमरा सड़क की ओर था और बाहर अच्छा-खासा छज्जा था जिसमें टहल कर सड़क का आनन्द लिया जा सकता था। पैर की ओर एक दरवाजा लगा हुआ था जिसमें से होकर सीढ़ियां सड़क पर गयीं थीं। उसी दरवाजे के बायीं ओर एक दरवाजा और था। ठीक इस दरवाजे के सामने एक दरवाजा और था जो छज्जे की ओर खुलता था। मेरे पलंग से दीवार लगभग दो गज की दूरी पर थी जिससे नीचे जाने का दरवाजा।

पलंग पर लेटने के पहिले सभी दरवाजे बंद कर लिए थे तथा लालटेन का प्रकाश भी कम कर दिया था।

काफी थका हुआ था अतएव मेरे सो जाने में अधिक देर न थी। मैं आराम से लेटा हुआ अगले दिन का कार्य क्रम सोच रहा था और कभी अन्य किसी विषय पर निमग्न हो रहा था।

एकाएक मुझे ऐसा प्रतीत हुआ मानों कोई घर से संबंधित दरवाजे से निकल कर छज्जे की ओर चला गया। थोड़ी ही देर में छज्जे से कोई व्यक्ति बिना मेरी ओर देखे ही सामने के दरवाजे से घर की ओर चला गया।

मैं सब कुछ देखते हुये भी मौन हूं। मेरी जिज्ञासा मानों उस ओर कदम भी नहीं बढ़ा पा रही थी। मैं देख कुछ रहा हूं और सोच कुछ रहा हूं। उसी प्रकार फिर एक व्यक्ति घर की ओर से आया और छज्जे पर चला गया। और छज्जे से एक व्यक्ति निकल कर फिर घर के अंदर चला गया। अब तो बराबर एक आना-जाना सा चला जा रहा है। एक व्यक्ति इधर आता है और उधर जाता है: दूसरा व्यक्ति उधर से आता है और इधर जाता है। सभी धवल वस्त्र पहिने हैं: सभी का आकार-प्रकार एक सा है। न वे मेरी ओर देखते हैं और न वे मेरे वहीं लेटे रहने की चिन्ता या परवाह ही करते हैं।

'यह क्या?' कहते हुए एकाएक मैं कांप कर उठ बैठा। मेरी जिज्ञासा-शक्ति लौट सी आयी थी। मैं क्या देख रहा था? सोचते सोचते मैं थरथर बेंत की तरह कांपने लगा। क्या स्वप्न देख रहा था? मैं आखें मलने लगा। नहीं—जिसे प्रत्यक्ष देखा उसे स्वप्न कैसे मान लूं?

अब कमरे में न कोई आता था और न जाता था।

मैं सोचने लगा 'मगर मैं तो किवाड़ बंद करके लेटा था। फिर इन्हें खोला किसने ? आश्चर्य ! ये लोग थे कौन ? फिर क्या मैंने किवाड़ बंद नहीं किये थे ?

हो सकता है कि

मैं पलंग से उठकर दरवाजे के पास आया। देखा कि दोनों दरवाजे खुले हुये हैं। तब निश्चित रूप से मैंने किवाड़े बंद नहीं किये थे।'

मैं इस प्रकार की कथाओं पर विश्वास नहीं करता। भूत-प्रेत की कथाओं को मैं मनगढ़ंत कहानियां समझता हूं। किन्तु आज यह सब क्या हो रहा है ? मेरा जी घबड़ा उठा।

मैंने दरवाजों को फिर से भली भांति बंद करके सिटकनी कस दी। लालटेन के प्रकाश को और तेज करके मैं फिर पलंग पर लेट गया।

क्षण भर तक सन्नाटा सा रहा। मेरी दृष्टि उन्हीं दरवाजों की ओर लगी हुयी थी। मैं सोच रहा था कि यदि इस घटना की पुनरावृत्ति हुयी तो मैं करूंगा क्या ?

और तभी फिर वह तमाशा शुरू हो गया। मैं लेटा हुआ स्तब्ध सा उसी नाटक को देख रहा हूं। धवल मूर्तियां इस दरवाजे को उस दरवाजे से इस दरवाजे को आ-जा रही हैं। एक-दो-तीन-चार-पांच-छः-सात-आठ-नौ-दस। संख्या तो बढ़ती ही जा रही है। अब तो मेरे पलंग पर भी धक्के लगने लगे। आने-जाने वालों की

भीड़ से कमरा भर सा गया है। मैं लेटा हुआ हूं किन्तु इसका मानो किसी को ज्ञान भी नहीं है।

हल्की सी चीख मार कर मैं उठ बैठा। देखा कमरे में कोई भी नहीं है। मैंने आंखें फाड़ कर दरवाजे की ओर देखा किन्तु दोनों दरवाजे खुले हुये थे। मैं पलंग से जल्दी नीचे कूदा। कोने में रखी हुयी छड़ी उठायी और लपक कर छज्जे पर आ गया।

छज्जे पर सन्नाटा था सड़क पर निस्तब्धता छाई हुई थी। बिजली के खंभों पर चमकते हुए लट्टू सड़क पर अपना प्रकाश बिखेर रहे थे किन्तु उस प्रकाश में मनुष्य क्या एक जानवर का बच्चा भी चलता हुआ दृष्टि-गोचर न हुआ। सरदी अधिक थी और मैं केवल कमीज पहिने हुए छज्जे पर खड़ा हुआ सरदी और भय से थरथर कांप रहा था।

पास में घड़ी भी न थी। कब तक इस प्रकार खड़े खड़े कांपना पड़ेगा? समय का अनुमान ही न लग रहा था। कमरे के अन्दर जाने का मेरा साहस ही न हो रहा था। तब क्या करूं?

लगभग घंटे भर तक मैं उसी दशा में टहलता रहा। तब नगर के किसी टावर ने दो बजाये। अरे अभी केवल दो ही बजा है? तब क्या करूं? क्या किसी को घर में जगाऊं? पर जगाने का साधन?

मुझे धीरे धीरे हकीमजी और कपूर साहब पर क्रोध आने लगा। क्या किसी अतिथि के साथ ऐसा व्यवहार करना चाहिए ? इस घर के इतिहास में अवश्य कुछ गड़बड़ी है। और क्या हकीमजी को यह बात मालूम न होगी ? तब-तब फिर मुझे इस कमरे में सुलाने का अभिप्राय क्या हो सकता है ?

इसी प्रकार तीन बजा और फिर चार। मेरी टांगों में खड़े रहने और टहलने की शक्ति सी न रह गयी थी। किन्तु भय ? वह तो मुंह बाये खड़ा था। पांच बजा। अभी तक प्रातःकाल के चिन्ह दृष्टिगोचर न हो रहे थे किन्तु सबेरा होने में अब अधिक देर न थी। नींद श्रम और भय से आंखें बन्द सी हुयी जा रहीं थीं किन्तु उपाय क्या था ?

धीरे से मैं कमरे में आया। थकी सी हुयी लालटेन अब भी प्रकाश से कमरे को आलोकित कर रही थी। धड़कते हृदय से मैंने खूंटी पर से अपना कोट उठाकर पहिन लिया और जल्दी से जूते पहिन कर मैं दरवाजा से जीने पर आ गया। ज्योंही मैं जीने पर आया ऐसा प्रतीत हुआ मानों मेरे भाग खड़े होने पर कमरे में सैकड़ों व्यक्ति एक साथ अट्टहास कर रहे हैं। इस घटना को आज लगभग पंद्रह वर्ष हो गये हैं किन्तु उस अट्टहास को मैं अभी तक नहीं भूल सका हूं।

मैं झटपट सड़क पर आ गया। घोर सन्नाटा। अपरिचित नगर और मैं भयाक्रांत। किधर जाऊं ? किन्तु पैर एक ओर चल पड़े।

मैं चलता ही चला गया। प्रातःकाल की सफेदी अब स्पष्ट होने लगी थी और सड़क पर लोग-बाग चलने भी लगे थे। संभवतः मैं घर से लगभग डेढ़ दो मील दूर आ गया था।

मैंने एक राहगीर को रोक कर पूछा 'यह सड़क कहां तक गयी है ?' उसने आश्चर्य से मेरे मुंह की ओर देख कर कहा 'सोन नदी तक।'

मैं आगे बढ़ गया। सचमुच सोन तट पर बना हुआ एक घाट निकट था। स्नान करने वालों की एक भीड़ सी थी। मैं घाट के निकट पड़े हुए एक तख्त पर बैठ गया। ओफ ! लगभग ५॥ घंटे बाद अब बैठा हूं। मैं लेट गया और एक हल्की सी झपकी आ गयी।

जब मैं उठा तब काफी धूप निकल आई थी।

एक टमटम-बिना छतरी का इक्का—पर बैठकर घर की ओर रवाना हुआ। जो कुछ भी हो आज ही घर लौट जाने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। इस घर में, इस नगर में अब एक दिन भी न रुक सकूंगा।

दूकान पर हकीम जी और कपूर साहब बैठे बात कर रहे थे। मुझे देखते ही मुसकरा कर कपूर साहब ने कहा 'इतने सवेरे किधर घूमने निकल गये मदन बाबू ?

मैं गंभीर मुद्रा के साथ बोला 'यों ही नदी तट तक घूमने चला गया था।'

वे लोग स्नानादि से छुट्टी पाकर बैठे हुये थे। मैं भी निवृत्त हो गया।

थोड़ी देर में कपूर साहब को अलग पाकर मैंने कहा 'मैं आज लौट जाना चाहता हूं। यह घर ठीक नहीं है।'

आश्चर्य से मेरी ओर देखते हुये उन्होंने कहा 'क्यों क्या हुआ?'

मैंने नींद भरी आंखों को जरा बंद करते हुये कहा 'वह कमरा अच्छा न था। मैं तो एक मिनट भी न सो सका।'

कपूर साहब चुप रहे। भोजन के समय कपूर साहब ने हकीम जी से कहा 'मदन बाबू को रात भर नींद नहीं आई।'

सिर हिलाते हुये हकीम जी ने किंचित मुसकुराते हुये कहा 'हां। यह कमरा कुछ ऐसा ही है। मदन बाबू को चुपचाप सो जाना चाहिये था। वे लोग किसी को तंग नहीं करते।

'वे लोग? तब क्या भूत-प्रेत? अयं—यह व्यक्ति सब कुछ जानता था तब भी एक अपरिचित व्यक्ति को उस कमरे में सुलाया।' मुझे क्रोध आ गया।

× × ×

प्रायः लोग अपनी सी प्रवृत्ति दूसरे की भी समझ लेते हैं। प्रत्येक प्राणी अपनी सहिष्णुता, प्रवृत्तियों और हृदय के मापदण्ड के अनुसार घटनाओं को तौलता है। एक ही वस्तु.....या घटना...भिन्न भिन्न व्यक्तियों पर भिन्न रूप से अपना प्रभाव डालती है। एक व्यक्ति का व्यवसाय ही वधिक का होता है किन्तु दूसरा व्यक्ति उस व्यवसाय को देखने मात्र से ही मूर्च्छित हो जाता है। पारस्परिक प्रवृत्तियों में इतना अंतर होता है कि बहुत से लोग भीषण, बीभत्स तथा अरुचिकर बातों को बड़े मनोयोग से करते हैं तथा इसके विपरीत दूसरे लोग इस प्रकार की बातों को सुनने मात्र से प्रभावित हो जाते हैं। अस्तु—

मैं उसी दिन दोपहर की गाड़ी से पटना लौट गया।

मुझे देखते ही राधा खिलखिला कर हंस पड़ी तथा हल्ला मचाते हुए बोली 'मैं न कहती थी जीजाजी एक ही दिन में लौट आयेंगे। जरूर रात में कोई चुहिया कमरे में खटकी होगी—बस जीजाजी भाग खड़े हुए।'

घर के सभी लोग हंस पड़े। हलकी सी मुसकुराहट के साथ श्रीमती जी बोलीं 'आप भी खूब हैं।'

किन्तु.....

मैं आज तक निर्णय नहीं कर सका कि तब 'वह क्या था।'

★

जब नक्षत्र टूटा

[१]

आम, नाशपाती, सन्तरा, केला.....

और.....

नर्मदा ने अपनी मां से सुन रक्खा था कि आकाश में जब नक्षत्र टूटता है तब पांच फलों का नाम ले लेने से किसी भी प्रकार की आपत्ति की आशंका जाती रहती है। आज जब उसने चमकते हुए नक्षत्र को क्षितिज की ओर दौड़ते और अदृश्य होते हुए देखा तो वह एकाएक फलों का नाम लेने लगी। किन्तु जल्दी में उसे पांचवें फल का नाम ही न याद आया। तब.....तब.....तब.....

'अमरूद——

लेकिन अब क्या होता है ? फौरन ही पांच फलों का नाम लेना चाहिए था, किन्तु नर्मदा तो केवल चार ही फलों का नाम ले सकी थी। उसका हृदय आशंका से भर गया था।

पड़ोस में जाकर उसने अपनी सहेली से पूछा 'क्यों जी, आकाश में जो तारा टूटता है उससे क्या होता है ?'

सरोज मुंह बनाकर बोली 'बड़ा बुरा होता है। देखने वाले पर कोई न कोई मुसीबत जरूर आती है।'

कुछ भयभीत होकर नर्मदा ने पूछा 'मगर क्या कर देने से उसका प्रभाव नहीं पड़ता सरोज ?'

सरोज पुरखिन की भांति मुंह मटका कर बोली 'दादी जी ने कहा था कि पांच फलों का नाम ले देने से इसका प्रभाव कम हो जाता है।'

'कम हो जाता है ? या फिर बिल्कुल नहीं पड़ता ?' और भी अधिक भयभीत होकर नर्मदा ने पूछा।

नकारात्मक ढंग से सिर हिलाते हुये सरोज नें कहा 'न-न-न, प्रभाव तो पड़ता ही है, किन्तु ऐसा करने से कुछ कम हो जाता है।'

नर्मदा का और कुछ पूछने का साहस न हुआ। उसे स्मरण नहीं आया कि मां ने उसे किन शब्दों में बतलाया था। और फिर वह तो पांच फलों का नाम भी ठीक से न ले सकी थी।

'तब क्या होगा ?' नर्मदा एक बार फिर सिहर उठी।

बात यह थी कि नर्मदा के पति आज ही रात को गाड़ी से कलकत्ते से वापिस आने वाले थे। वे अपने व्यवसाय के संबन्ध में एक सप्ताह के लिए कलकत्ते गए थे और आज सबेरे ही उनका तार आ गया था कि वे रात को ११॥ बजे की गाड़ी से नर्मदा के पास पहुंच जायेंगे। नर्मदा दिन भर आनन्द के स्रोत में बहती रही और इस काल्पनिक अवसर की प्रतीक्षा में उसे दिन भर का समय काटना भी कठिन हो गया था। उसके विवाह को अभी दिन ही कितने हुये हैं ? पूरे दो वर्ष भी तो नहीं हुए। वह पति के स्वागत की सारी तैयारी समाप्त करके ज्यों ही बाहर आकर कमर सीधी करने के लिए बिना बिछी खाट पर लेटी वैसे ही——

आकाश में नक्षत्र टूटा।

तभी से नर्मदा भयभीत है। वह घर में लगभग अकेली ही है। दो-तीन नौकर-नौकरानियों को छोड़कर घर में उसका अपना कोई नहीं है। वह सम्पन्न घर में ब्याह कर आयी है, किन्तु इस घर में विजय कुमार अकेले ही थे। पिता-माता की मृत्यु विवाह के तीन साल पहिले ही हो गयी थी। बड़ी बहिन नन्दा का विवाह माता-पिता की मृत्यु के पूर्व ही हो गया था। नाना प्रकार के भारों से बोझिल विजय कुमार नर्मदा को पाकर अपने

तक को भूल गया था। चारों ओर व्यापार फैला रहने पर भी कभी वह नर्मदा को अकेली छोड़कर बाहर न जाता था। विवाह के पश्चात् वह पहिली बार ही परमावश्यक कार्य होने के कारण कलकत्ता गया था। नर्मदा एक-एक दिन गिन कर पति के आने की राह देख रही थी। घर में एक नौकरानी थी और एक दस-ग्यारह वर्ष की छोकरी गौरी। नर्मदा इसी गौरी से मिल जुल कर अपना जी बहला लेती थी।

आज सबेरे ही तो तार आया था कि उसके सर्वस्व रात्रि की गाड़ी से उसके पास पहुंच रहे हैं। किन्तु दिन भर मिलन-उन्माद में चूर रह कर संध्या को अचानक आकाश में नक्षत्र टूट गया था।

हाय वह क्यों बाहर आकर लेटी थी? किन्तु अब वह क्या करे?

उसने गौरी से पूछा 'क्यों री, तूने कभी आसमान में तारा टूटते देखा है?'

ग्यारह वर्ष की छोकरी गौरी स्वीकारात्मक ढंग से सिर हिलाती हुई स्फुट-स्वर में बोली 'हां बहू जी, बहुत दफा देखा है।'

क्षण भर चुप रह कर नर्मदा फिर पूछ बैठी 'क्योंरी, इससे होता क्या है?'

बड़ी-बड़ी आंखें निकाल कर गौरी बोली 'बड़ा पाप होता है बहू जी। हमारे पड़ोस की रमरजिया का भाई

दूसरे ही दिन मर गया। उसने नछत्तर टूटते हुए देखा था।'

नर्मदा सिर से पैर तक कांप उठी। गौरी कहती गयी 'सचमुच बड़ा बुरा होता है बहू जी। पारसाल ही की तो बात है.....'

उसे झिड़कती हुयी नर्मदा बोली 'चुप मरी, तुझसे व्याख्यान देने के लिए किसने कहा था ? जा, एक गिलास ठंडा पानी ले आ।'

गौरी चली गयी। नर्मदा का जी धड़क रहा था। 'बस, वे आज आ जांय बस' उसने दिल में कहा।

धीरे-धीरे रात के साढ़े ग्यारह बज गये। नर्मदा के धड़कते हुए हृदय ने कहा 'बस, वे स्टेशन पर आ गये होंगे। साढ़े ग्यारह बजे ही तो गाड़ी आती है। आने में भी तो घंटा भर लग जायगा।'

बारह —

नर्मदा के कान सड़क की ओर लग गये। मोटर की आवाज आने वाली ही है, लेकिन अभी देर है। साढ़े बारह के पहिले नहीं आ सकते। फिर कभी-कभी गाड़ी भी लेट हो जाया करती है।

साढ़े बारह से अधिक हो गया था। नर्मदा का हृदय धड़क उठा। अब तो आ जाना चाहिए ? लेकिन अभी मोटर लेकर ड्राइवर भी तो नहीं लौटा ? मोटर तो आयेगी ही।

और तभी द्वार पर मोटर आकर रुक गयी।

ड्राइवर ने भीतर आकर सूचना दी 'मालिक इस गाड़ी से नहीं आये ?'

नर्मदा कटे वृक्ष की भांति पलंग पर गिर पड़ी। 'क्यों नहीं आये ? कदाचित् गाड़ी छूट गयी ? हाय, क्यों, नहीं, और.....तारे को भी आज ही टूटना था।'

नर्मदा रात भर तड़पती रही।

[२]

नर्मदा ने रो-रोकर दूसरा दिन काटा। नौकरानी धनपत्ता और गौरी ने उसे बार-बार समझाया 'ये तो मर्द मानुस हैं बहू जी। इन्हें पचास काम लगे रहते हैं। शायद गाड़ी ही छूट गई हो। इसमें घबड़ाने की क्या बात है ? ऐसा तो होता ही रहता है बहू जी।'

कदाचित् नर्मदा भी इतना न घबड़ाती, किन्तु नक्षत्र टूटने वाली घटना ने उसे बेचैन कर दिया था। उसे किसी प्रकार भी सन्तोष न होता था। वह बड़े धैर्य के साथ आज की गाड़ियों का रास्ता देखने लगी।

दिन व्यतीत हुआ, रात्रि आ गयी। आज भी सभी ट्रेनें बिना विजयकुमार के ही स्टेशन पर आयीं। नर्मदा का बुरा हाल था। हाय, यदि वे ठीक से पांच फलों का नाम भी ले सकती, तो प्रभाव तो कम हो गया होता।

रात भर नर्मदा बेचैनी के साथ करवटें बदलती रही। उसे ऐसा आभास होता था कि अवश्य कोई

दुर्घटना हो गयी है। सबेरे ही उसने मुनीमजी को बुलवा भेजा।

'बाबू जी क्यों नहीं आये ?' नर्मदा ने सूजी हुई आंखों से पूछा।

मुनीम जी अनुभवी व्यक्ति थे। बोले 'तो इसमें घबड़ाने की क्या बात है बहूजी ? कोई काम ही लग गया होगा। बड़े मालिक तो हर महीने कलकत्ते जाते थे। छोटे बाबूजी बहुत दिन बाद कलकत्ते गये हैं। हो सकता है कि काम खतम न हुआ हो। आते ही होंगे आज कल में।'

नर्मदा चुपचाप बैठी रही। मुनीम जी ने फिर कहा 'आप व्यर्थ में न घबड़ायें। हम लोग तो मौजूद ही हैं। आपको कोई तकलीफ न होगी। या तो आज कल में बाबू जी आ जायेंगे या उनकी चिट्ठी आयेगी।'

समझा-बुझाकर मुनीमजी चले गये। किन्तु फिर भी भोली-भाली अल्हड़ नर्मदा को संतोष न हुआ। उसे बार-बार नक्षत्र टूटने वाली घटना याद आ जाती थी।

उसने धनपत्ता से पूछा 'क्यों री, क्या तारा टूटना बहुत बुरा होता है ?'

एक लम्बी सांस लेकर धनपत्ता बोली 'हां, होता तो है बहू जी। मालिक राजी-खुशी घर आ जांय, यही हम लोगों की भगवान से प्रार्थना है।'

नर्मदा का जी बैठा सा जा रहा था। वह जाकर

चुपचाप पलंग पर लेट गयी। उसी रात को उसे ज्वर आ गया। सबेरे भी ताप मान बहुत ऊंचा था। दोपहर होते-होते वह संज्ञाहीन सी होकर अनाप-शनाप बकने लगी। तीव्र ज्वर में भी वह बार-बार द्वार पर जाती और सड़क की ओर देख कर लौट आती।

हालत बिगड़ती देख मुनीमजी ने डाक्टर को बुला भेजा।

नर्मदा के शरीर और हृदय की भली भांति परीक्षा करके डाक्टर ने कहा 'ज्वर तेज है और अभी उसके घटने के लक्षण भी नहीं दिखलायी पड़ते।'

मुनीम जी ने डाक्टर साहब के मुंह की ओर देखते हुए कहा 'तो क्या बाबूजी को तार दे दूं ?'

'बाबूजी' शब्द सुनते ही नर्मदा ने आंख फाड़ कर डाक्टर की ओर देखा।

रोगिणी का अभिप्राय समझ कर आश्वासन के स्वर में डाक्टर ने उससे कहा 'क्या बाबूजी को बुलवा दूं ?

नर्मदा ने निराशा की मुद्रा बनाकर नकारात्मक ढंग से सिर हिलाते हुए कहा 'ऊं-हूं, वे कहां हैं ?' वह तो.....आपको नहीं मालूम डाक्टर साहब..... तारा तो टूट गया है। वे अब न-स-न.....नहीं आ सकते. ....'

डाक्टर ने धीरे से सिर पर हाथ फेरते हुये कहा

'नहीं बेटी, वे आज ही आ जायंगे। हमने उन्हें बुलाया है। तुम जल्दी ही ठीक हो जाओगी।'

नर्मदा प्रलाप में न जाने कैसी सूरत बना कर बोली 'झूठ, बिलकुल झूठ.....वे तो गाड़ी.....नहीं तो..... ..... हां.....चमकता हुआ तारा जो.....फिर जब टूट गया.....नहीं, नहीं.....वह तो टूट गया..... डाक्टर साहब, ऊं-हूं।'

डाक्टर साहब मुनीमजी को एक ओर ले गये तथा बोले 'कोई दुर्घटना हुई है क्या ? दिमाग में कुछ असर जरूर पड़ा है।'

मुनीम जी ने आश्चर्य प्रकट करते हुए कहा 'दुर्घटना तो कोई नहीं हुई डाक्टर साहब। मालिक भी आज आठ-दस रोज से यहां नहीं हैं। अभी कल बड़े मजे में मुझसे बातचीत की है। मेरी समझ में तो ऐसी कोई भी बात नहीं हुई है।'

डाक्टर साहब सिर हिलाते हुए बोले 'अच्छी बात है। कलकत्ते तार तो भेज ही दीजिये।'

[३]

दूसरे ही दिन नर्मदा की हालत शोचनीय हो गयी। वह कभी हंसती, कभी रोती और कभी उठकर बाहर दौड़ने की चेष्टा करती। नौकर-चाकर यह सब हाल देख कर घबड़ा गये।

दोपहर को डाक्टर ने आकर फिर परीक्षा की।

रोगिणी की दशा देख कर डाक्टर ने एक लम्बी सांस ली और कहा 'ज्वर से तो इतना डर नहीं है, किन्तु हृदय की गति अत्यन्त शोचनीय है। वह किसी समय भी 'कोलैप्स' हो सकता है। आपने बाबू जी को तार दे दिया ?

मुनीम जी बोल उठे 'जी हां, वह तो कल ही दे दिया गया था। क्या बतलाऊं डाक्टर साहब आपसे ? अब तो बहूजी को संभालना मुश्किल हो गया है। मैं तो बहुत ही घबड़ा गया हूं। जब तक बाबूजी न आ जायंगे सारी जिम्मेदारी मुझ पर ही रहेगी। आज उन्हें आ जाना चाहिये शाम तक।'

डाक्टर उपचार बतला कर चला गया।

एकाएक पास में बैठी हुई गौरी को आंख फाड़ कर देखते हुए नर्मदा ने कहा 'तेरी रमरजिया.....मर गयी न.....और गौरी भी जो.....नक्षत्तर.....उफ़..... आम, नाशपाती, सन्तरा, केला.....'

गौरी उदास भाव में बोली 'चुपचाप सो जाओ बहू जी। वह सब झूठ था।'

नर्मदा कहती गयी 'तब फिर.....तब फिर..... आम, नाशपाती, संतरा, केला.....और वह क्या होता है.....आम.....सन्तरा.....'

× × ×

और शाम को—

बिजली की भांति घर में घुसते हुए विजयकुमार ने कहा 'क्या हाल है ?'

मुनीमजी ने उदास भाव से कहा बहूजी की हालत अच्छी नहीं है। अब आप आ गये हैं, शायद ठीक हो जाय।'

विजयकुमार धीरे से नर्मदा के सिरहाने जाकर खड़े हो गये। वह आंख बंद किये हुए पड़ी थी।

धीरे से माथे पर हाथ फेरते हुए उनके मुंह से निकला 'ओफ्, कितना तेज है ज्वर।'

और—

तभी नर्मदा ने अपनी आंख खोल दी।

विजयकुमार ने स्नेह भरे शब्दों में कहा 'नम्मी !'

नर्मदा ने आंख फाड़ कर पति की ओर देखा। देखती रही वह एक टक।

विजयकुमार ने धीरे से कहा 'कैसा जी है नम्मी ?'

नर्मदा आश्चर्य से आंख फाड़ कर धीरे से बोली 'तुम.....अमरूद.....'

विजय ने कहा 'मैं आ गया, नम्मी।'

क्षण भर चुप रह कर और फिर नकारात्मक ढंग से सिर हिलाती हुई नर्मदा चिल्लायी 'नहीं-नहीं-नहीं..... टूट चुका.....गोरी...रमरजिया—तुम भागो जी..... ई ई.....'

और वह बुरी तरह हांफने लगी।

गंभीर होकर विजय ने मुनीम जी से कहा 'जल्दी से डाक्टर को बुलवाइये।'

नर्मदा बुरी तरह से प्रलाप करती हुयी हांफ रही थी। विजयकुमार उसे पकड़ कर पास बैठ गये। थोड़ी देर बाद वह हतप्रभ होकर पड़ रही। उसके हृदय की ओर देखा और एक चीख मारी।

हालत बिगड़ती देखकर डाक्टर ने इंजेक्शन दिया। नर्मदा ने आंख बन्द कर ली।

एक मिनट बाद ही उसने फिर आंख खोली। उसकी आंखें चढ़ने लगीं।

विजय ने चिल्लाकर कहा 'नम्मी ! नम्मी !!'

नर्मदा ने भरपूर आंखें खोल कर एक बार पति की ओर देखा और धीरे से कहा 'तुम.....आप——और आम, नाशपाती.....संतरा, केला।'

और उसने आंख बंद कर ली।

डाक्टर ने नब्ज पर हाथ रखते हुए कहा 'फिनिश्ड।'

× × ×

नक्षत्र टूट गया था। किन्तु क्या यह सच है कि उक्त घटना पर उसी का प्रभाव था ?

———